वर्ष पहला । श्रीरामतीर्थ ग्रन्थावली । खण्ड दूसरा ।

श्री

स्वामी रामतीर्थ ।

उनके सदुपदेश–भाग २ ।

प्रकाशक,

श्री रामतीर्थ पब्लिकेशन लीग ।

लखनऊ ।

प्रथम संस्करण } प्रति ३००० } —:o:— { जनवरी १९२० { माघ १९७६

वार्षिक मूल्य के हिसाब से:

सादी ।–) } डाक व्यय सहित { सजिल्द ॥)

फुटकर:

सादी ॥) } डाक व्यय अलग { सजिल्द ॥।)

[वार्षिक मूल्य डाक व्यय सहित सादी ३॥) सजिल्द ४)]

विषयानुक्रम ।

विषय	पृष्ठ
जीवन चरित	१
सान्त में अनन्त	२३
आत्मसूर्य और माया	४५
ईश्वर-भक्ति	७३
व्यावहारिक वेदान्त	९६
पत्र मञ्जूषा	१०८
माया	११४

———— :o: ————
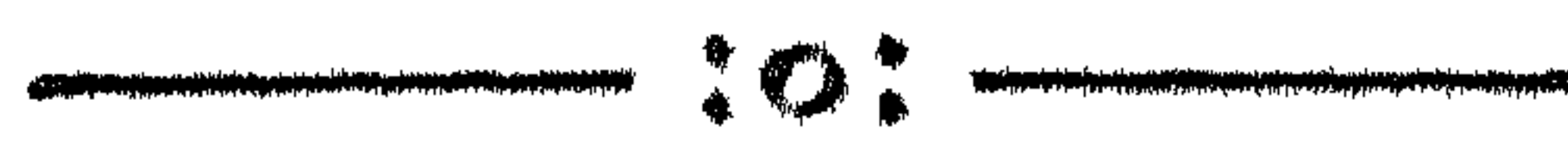
PRINTED BY K. C. BANERJEE AT THE ANGLO-ORIENTAL PRESS
LUCKNOW.
and
Published by Swami N. S. Swayam Jyoti,
Secretary.
The Rama Tirtha Publication League ; Lucknow.
1920.

क्या तुम्हें अपने ब्रह्मत्व के
विषय में कुछ संशय है ?
ऐसे संशय की अपेक्षा हृदय में
बन्दूक का गोला क्यों नहीं मार लेते ?
क्या तुम्हारा हृदय तुम्हें धोखा देता है ?
उसे उखाड़ दो ; निकालकर फेंक दो।
निर्भय होकर प्रसन्न हो,
और सत्य में प्रवेश करो।
क्या तुम डरते हो ? किससे ?
परमेश्वर से ? तब मूर्ख हो।
मनुष्य से ? तब कायर हो।
पंचभूतों से ? उनका सामना करो।
अपने आप से ? अपने आप (आत्मा) को जानो।
कह दो कि "अहं ब्रह्मास्मि" मैं ब्रह्म हूं।

राम (सत्य) तीर्थ।
(RAMA TRUTH.)

श्री रामतीर्थ ग्रन्थावली के ग्राहकों के नियम ।

१—इस ग्रन्थावली का मुख्य उद्देश यह रहेगा कि ब्रह्मलीन स्वामी रामतीर्थ जी के उपदेशों और उनके उपदेशों के अनुकूल अन्य साहित्य का हिन्दी भाषा में यथासाध्य सस्ते मूल्य पर प्रचार करना।

२—एक वर्ष में २०"+३०" (डबल क्राऊन) १६ पेजी आकार के १२८ पृष्ठ के आठ खण्ड अर्थात् १००० पृष्ठ दिये जायंगे और एक वर्ष के ऐसे आठ खण्डों का मूल्य डाक व्यय सहित कागज़ी जिल्द का ३॥) और कपड़े की जिल्द का ४) रहेगा।

३—ग्रन्थावली का वर्ष कार्तिक से आरम्भ होकर आश्विन में समाप्त होगा। वर्षारम्भ में ही प्रथम खण्ड वी० पी० द्वारा भेजकर वार्षिक मूल्य वसूल किया जायगा या ग्राहक को मनीआर्डर से भेजना होगा।

४—वर्ष के मध्य या अन्त में मूल्य देनेवालों को उसी वर्ष के आठ खण्ड दिये जायंगे। अन्य किसी मास से १२ मास तक का वर्ष नहीं माना जायगा। किसी ग्राहक को थोड़े एक वर्ष के और थोड़े दूसरे वर्ष के खण्ड वार्षिक मूल्य के हिसाब से नहीं दिये जायंगे।

५—किसी एक खण्ड के ख़रीदार को उस खण्ड की कीमत स्थायी ग्राहक होते समय उसके वार्षिक मुल्य में मुज़रा नहीं की जायगी, अर्थात् वार्षिक मूल्य की पूरी रक़म एक साथ पेशगी अदा करने पर ही वह खरीदार स्थायी ग्राहक माना जायगा।

६—एक खण्ड का फुटकर मूल्य सादी ॥) और सजिल्द ॥।) होगा जिसमें डाक व्यय ग्राहक को देना होगा।

७—पत्र व्यवहार में उत्तर के लिये टिकट या कार्ड भेजे विना उत्तर न दिया जायगा। पत्र व्यवहार करते समय कृपया अपना पता पूरा और साफ २ लिखें।

श्री स्वामी रामतीर्थ ।

देहरादून १९०५

॥ ॐ ॥

स्वामी रामतीर्थ ।

संक्षिप्त जीवन-चरित ।

मृत्यु बहुबार भी बाना बने, ताना मम की नित्य ही ।
हमें तथापी न मार सकती, बात यह है सत्य ही ॥
जनम हमारा कभी हुआ नहिं, पुनि संख्या सांस-जन्म की ।
वैसे ही अगणित हैं जंमे, अनिद्र सिन्धु की नवलहरी ॥

फेंक दो मृत देह को पर कुछ बिगडता क्या कभी ।
फूंक दो चाहे इसे पर नष्ट होता क्या कभी ॥
है अनन्तता मन्दिर मेरी सान्त होती नहिं कभी ।
ज्योति हूं उस अग्नि की जो बुझ नहीं सकती कभी ॥

सब नेत्र मेरे नेत्र हैं, हैं कान भी मेरे सभी ।
विश्व में जितने हैं मन क्या पृथक हो सकते कभी ॥
यमराज से डरता नहीं मैं, काल मेरा ग्रास है ।
लोक की बहुरूपता मम प्यास की नित आस है ॥

गृहस्थाश्रम में गोसांई तीर्थराम एम. ए. के नाम से परिचित स्वामी राम का जन्म पंजाब प्रान्तीय गुजरानवाला जिले के मुरालीवाला ग्राम में दीपमालिका के दूसरे दिन

वे सदा प्रफुल्लित रहते थे। जो प्रफुल्लता किसी प्रकार से भी नष्ट नहीं होती, वह उनके बांटे पड़ी थी। अमेरिका की 'ग्रेट पैसिफिक रेल रोड कम्पनी' के मैनेजर ने उन्हें 'पुलमैन कार' में स्थान देते हुए कहा था, "उनकी मुस्कियां वशीभूत करने वाली हैं"। सेंट लुई की प्रदर्शिनी में धार्मिक संघ के महान् समारोह के सम्बन्ध में स्थानीय समाचार पत्र ने लिखा था, कि समारोह में एक मात्र चमत्कारपूर्ण वस्तु स्वामी राम थे। घरेलू ढंग से की हुई शंकाओं और प्रश्नों का उत्तर देनें में मिनटों तक बराबर हँस कर मानो वे अप्रत्यक्ष रीति से कहते थे कि ईश्वर और मनुष्य सम्बन्धी यावत् प्रश्नों के उत्तर के लिये मेरा मनोहर व्यक्तित्व और हृदयग्राही चैतन्यता ही यथेष्ट हैं। उनकी मुस्कराहट बिजली का प्रभाव रखती थी। वे लोगों को सनसना देते थे। वे राम बादशाह कहलाते थे, क्योंकि अपने उल्लासपूर्ण जीवन से उन्होंने सांसारिक सम्राटों की सजधज वस्तुतः उपहास्य बना दी थी। एक बार उन्हों ने लिखा था, "मैं राम बादशाह हूँ जिसका सिंहासन तुम्हारे हृदय हैं। जब मैंने वेदों के द्वारा प्रचार किया था, जब मैंने कुरुक्षेत्र, जेरूसलम, और मक्का में उपदेश दिया था, तब लोग मुझे नहीं समझे थे। अब फिर मैं अपना स्वर उठाता हूँ। मेरा स्वर तुम्हारा स्वर है 'तत् त्वम् असि'। जो कुछ तुम देखते हो सब तुम्हीं हो। कोई शक्ति इसे रोक नहीं सकती, कोई राजा, प्रेत या देवता इसके सामने ठहर नहीं सकते। सत्य की आज्ञा अटल है। म्लान मत हो। मेरा शिर तुम्हारा शिर है, इच्छा हो काट लो किन्तु इसके स्थान पर सहस्रों निकल आवेंगे"।

वे पूर्ण प्रेममय थे। नीचातिनीच से भी उनका व्यवहार अत्यन्त कोमल होता था। वे अपनी पुस्तकों, कलमों, पेंसिलों,

छूरियों और आरियों तक को जीवधारियों की भांति सम्बोधन करते थे और अनेक बार मैंने उन्हें उनको चाटते चुमकारते तथा बड़े स्नेह से बात चीत करते देखा है। उनके विचार और वार्तालाप प्रत्येक वस्तु को ऊँचा कर देता था। उनके लिये कोई ऊँचा या नीचा, जानदार या बेजान नहीं था। प्रत्येक वस्तु उनके लिये अपने बाह्य रूप से कुछ अधिक थी-परमेश्वर थी। जिस किसी से उनकी भेंट होती थी उससे वे 'एकता' की हृदय और अन्तःकरण से चेष्टा करते थे, और अपने आपकी उससे सम्पूर्ण अभिन्नता का अनुभव करते थे। और इस प्रकार पहले उसके हृदय को वशीभूत करने के बाद अप्रत्यक्ष सूचनाओं द्वारा सत्य के नाम में वे उसकी बुद्धि से विनय करते थे। नेत्र बन्द कर, गहरी और स्वच्छ सत्यता के गम्भीर स्वरों से, वे उर्दू और फारसी के अपने कतिपय प्रिय पद्यों का जब बार २ पाठ करते थे, तब उनके गुलाबी गालों पर से आनन्दाश्रु बह चलते थे। उन पद्यों का ऐसा प्रभाव उन पर होता था कि प्रत्येक उपस्थित व्यक्ति को प्रत्यक्ष हो जाता था कि राम उनमें बिलकुल डूब गये हैं। घंटों भर उनकी यह दशा रहती थी। अपनी सार्वजनिक वक्तृताओं के बीच में वे अपनी दशा को भूल कर अपने प्रिय पवित्र मंत्र "ॐ" "ॐ" "ॐ" की आवृत्तियां करने लगते थे, यहां तक कि उनके अमेरिकन स्नेहियों ने कहा था कि शरीर-केन्द्र में वे बहुत ही कम रहते थे। उनका निवास सदा परमात्मा में रहता था। कुछ साल हुई अमेरिका के कुछ मनोविज्ञान-शास्त्रियों ने भविष्यद्वाणी की थी कि स्वामी जी के से उच्च आध्यात्मिक विचारों में जो पूर्णतया व्यस्त है, और इस तथ्य को नितान्त भूल कर कि वह शरीरधारी, है उनमें दिन रात निरन्तर लीन रहता है, वह इस शारीरिक ढांचे की हदबन्दी

में अधिक काल तक नहीं ठहर सकता। वे वस्तुतः अपने को भूल गये थे, अथवा कदाचित बहुत ही क्षीण स्मृति रह गई थी। अपना शरीर राम के लिये उन्नततर जीवन का वाहन मात्र था, जैसा कि ईसा के शरीर के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था। अमेरिका में राम ने कहा था, "जीवन इस शरीर-पींजरे में बन्द तोते के पंखों की फड़फड़ाहट मात्र है"। शब्दों द्वारा उनके शरीर की मोहनी अंकित नहीं हो सकती। उनकी दृष्टि आपका सम्पूर्ण आन्तरिक प्रेम उनकी ओर आकृष्ट कर लेती थी। उनका स्पर्श मात्र ही शुष्क हृदयों में भी कवियों की सी उमंगें उत्पन्न करता था, और मनुष्य की आत्मा को दैवी आनन्द की सुवासित हरियाली से सुसज्जित कर देता था। सभी महात्माओं के जीवन का यही लक्षण रहा है। पौराणिकों ने अपने काव्यमय वर्णन में इसका मनोहर उल्लेख इस प्रकार किया है कि अमुक के आगमन से सूखे वृक्षों में नई पत्तियां और कलियां निकल आई, अंगूरों के बाग हरे भरे हो गये, और सूखे सोते मानो हर्षोन्माद में स्फटिक जल की धारा बहाने लगे।

समुद्रयात्रा में स्वामी राम को उनके अमेरिकन सहयात्रियों ने अमेरिकावासी समझा था। जापानी उनसे ऐसा स्नेह करते थे कि मानों वे उन्हीं के देश के निवासी हैं। जब वे उनके देश से अमेरिका को उड़ गये थे, तब उनके परिचित अनेक जापानियों ने कहा था, अब भी हमें अपने कमरों में उनकी ईषत्‌हास्य की विद्युच्छटा के दर्शन होते हैं। उनके ललाट की चमत्कारिणी विशुद्धता अब भी हमें अपने प्रिय फुजीयामा हैम शिखर की भांति याद है। गैरिक वस्त्रधारी व्याख्याता राम जापानी चित्रकार को अग्नि स्तम्भ प्रतीत हुआ था, जो श्रोतृमण्डली में जीवनस्फुलिङ्गों की वर्षा

कर रहा था, नाकि शब्दों की। कैलिफोर्नियां में दैवी ज्ञान की मशाल, हिमालय का बुद्धिमान पुरुष कहकर उनका अभिनन्दन किया गया था, जिसके अनुभव के सामने सभ्यता के वर्तमान क्रम का उलट जाना अवश्यम्भावी समझा गया था। वे अमेरिका की सब रियासतों में घूमे और उतने ही व्याख्यान दिये जितने दिन कोलम्बिया में ठहरे। उन्हों ने कहा, "मैं पूर्ति करने को आता हूं, नाकि नष्ट करने।" ईसाई गिरजों में उन्होंने व्याख्यान दिये, और उनके व्याख्यान वैसे ही मौलिक होते थे जैसे व्याख्यानों के उनके नियत किये हुए शीर्षक। डेनर में बड़े दिन की संध्या को उनके व्याख्यान का विषय था, "प्रत्येक दिन नये वर्ष का दिन और हरेक रात बड़े दिन की रात है"। एक अमेरिकन ने उनके अन्य व्याख्यानों का संक्षिप्त वर्गीकरण निम्नलिखित शीर्षक देकर किया है।

[१] तुम क्या हो? [२] आनन्द का इतिहास और घर। [३] पाप का निदान, कारण और उपचार। [४] प्रकाश। [५] आत्म विकास। [६] प्रकाशों का प्रकाश। [७] यथार्थ-वाद और आदर्शवाद एकीकृत। [८] प्रेम के द्वारा ईश्वर का अनुभव। [९] व्यावहारिक वेदान्त। [१०] भारत।

और अमेरिका में दिये हुए उनके उपदेशों का सार-संकलन उसने इस प्रकार किया है:—

(१) मनुष्य का देवत्व।

(२) संसार उसकी सहकारिता करने को बाध्य है जो सम्पूर्ण संसार से अपनी एकता समझता है।

(३) शरीर को सचेष्ट संघर्ष में और मन को प्रेम तथा शान्ति में रखने का ही अर्थ है यहीं अर्थात् इसी जीवन में पाप और दुःख से मुक्ति।

(४) सब से अभिन्नता के व्यावहारिक अनुभव से हमें

समतोल निश्चिन्तता का जीवन प्राप्त होता है।

(५) सकल संसार के पवित्र धर्मग्रन्थों को हमें उसी भाव से ग्रहण करना चाहिये जैसे हम रसायनविद्या का अध्ययन करते हैं और स्वयं अपने अनुभव को अन्तिम प्रमाण मानना चाहिये।

दो वर्ष से भी कम में उन्हों ने अमेरिका में कितना कार्य किया, अथवा जिन अमेरिकनों को उनका संसर्ग हुआ उन पर कैसे संस्कार पड़े, इसका सविस्तर वर्णन मैं यहां नहीं कर सकता। किन्तु अमेरिका से भारत के लिये उनके यात्रा करने के समय विदाई की सभा में कुछ अमेरिकनों ने निम्न लिखित जो कविता पढ़ी थी, उसे बिना उद्धृत किये मैं नहीं रह सकता:—

डाल रसाल पै बैठी सी कोयल "राम" हमैं नित गाय सुनावत।
सीरी भरी पंडिताई से बातैं हैं पूरब की जो विशेष कहावत॥
देश हमारे प्रतीची कृपा करि हैं उनको बिस्तार बढावत।
मारग के तो पछी हू बने ये संदेश सुरेश को पूरो हैं लावत॥

घनघोर पुकार यों गूँजति है सुन लेइ जो चाहत याहि सुनो।
"है ईश की वस्तु सभी जग की पुनि ईश सभी के सदा ही गुनो"॥
समुझाय संदेश यों दूरि भजे द्रुत तारा है टूटत रात मनो।
पै स्वर्ग की ज्योति को लेश सो छोडि चले हेतु स्वजाति के प्रेमदुनो॥

प्रिय राम हमारो है अन्त प्रणाम कछू जिमि औरहु बूझि परै।
मृदु हांसी तुम्हारी अनोखी बडी जो निर्जीवहु में नवशक्ति भरै॥
यहि लोक मैं फेर चहैं न मिलैं पर दिव्य प्रभा न कभौ बिसरै।
तेरो भलो है सदा ही घनो हरि राजै तुव में तू हरि में बिहरै॥

मिस्रमें मुसलमानों ने उनका हार्दिक स्वागत किया था। उनकी मसजिद में उनके लिये राम ने फारसी में एक व्याख्यान दिया। दूसरे दिन समाचार पत्रों ने लिखा कि, स्वामी

राम एक प्रतिभाशाली हिन्दू हैं और उनसे भेंट होना बड़े गौरव की बात है। टोकियो के राजकीय विश्वविद्यालय के संस्कृत कालेज के अध्यापक टका कुटसू ने कहा था कि राम के सिवाय किसी दूसरे वास्तविक भारतीय तत्त्ववेत्ता के दर्शन मुझे नहीं हुए। ऐसा उनका प्रेम था। भारत लौटने पर मथुरा के उनके कुछ भक्तों ने एक नया समाज संगठित करने की प्रार्थना की थी। राम ने यह कहते हुए कोरा जवाब दिया कि भारत में जितनी सभायें काम कर रही हैं, वे सब मेरी ही सभायें हैं और मैं उनके द्वारा काम करूँगा। इस समय उन्होंने हर्षोन्मत्त होकर नेत्र मूँद लिये, प्रेममय आलिंगन के चिह्नस्वरूप अपने हाथ फैलाये, और अश्रुपात करते हुए नीचे लिखे शब्द कहे, जिनसे उनके महान् विश्वव्यापी प्रेम तथा महत्तर आत्मिक मौनता पर बड़ा प्रकाश पड़ता है; "इसाई, हिन्दू, पारसी, आर्य्यसमाजी, सिख, मुसलमान और वे सभी जिनकी नसें, अस्थियां, रक्त और मस्तिष्क की रचना मेरे प्रिय इष्टदेव भारत भूमि का अन्न और निमक खाकर हुई हैं, वे सब मेरे भाई हैं, नहीं, मेरी आत्मा ही हैं। कह दो उनसे मैं उनका हूँ। मैं सब को आलिंगन करता हूँ। मैं किसी को परे नहीं करता। मैं प्रेम हूँ। प्रकाश की भांति प्रेम हरेक वस्तु और सब को प्रकाश के चमत्कार से सज्जित करता है। सत्य ही सत्य में प्रेम की कान्ति और प्रवाह के अतिरिक्त और कुछ नहीं हूँ। मैं सब से समान प्रेम करता हूँ।"

बनि घनघोर मेघ घेरि कै गगन मंडल, बडे २ बूंदन सों प्रेम बरसावैंगे।
साहस बढाय कै करि है प्रतिरोध कोऊ, बांह धरि वाको वाही प्रेम में न्हवावैंगे॥
सभायें बडी औ भारत समुदाय जेते, उनसो कदापि नाहीं बिलग बनावैंगे।
शक्तियां हैं जौन स्वागत सभीको आज, शान्ति सुख प्रेमकी बहिया बहावैंगे॥

राम विचित्र पुरुष थे। वे वर्तमान और भावी मानव-

जाति के विश्वव्यापी चैतन्य में हृदय और आत्मा सहित अपने को विसर्जित कर देना चाहते थे। उनकी अंग्रेजी काव्यकृति में जिस अद्भुत ज्ञान की कुछ अभिव्यक्ति हुई है, वह उनके मृत्यु-लोक में अवस्थान के अल्पकाल का महत्तम कार्य है। पूर्ण आत्मानुभव की प्राप्ति के लिये वे दिन रात प्रयत्न करते थे। जहां कहीं उनकी दृष्टि पड़ती थी, सब कुछ ईश्वरमय-उन्हें ईश्वरमय दिखाई देता था। वे प्रबुद्ध साधक थे। उनमें बुद्धि और आत्मा की अत्युन्नत दशाओं का मिलान हुआ था। रावी नदी के तट पर अनेक रात्रियां उनकी योगाभ्यास में बीतीं। अनेक रातों को वे इतना रोये कि सबेरे बिछौने की चद्दर भींगी मिलती थी। कहा जाता है कि, अगले दिनों कट्टर ब्राह्मणपन की दशा में जब प्रिय संस्कारों से उनका हृदय परिपूर्ण था, सनातन धर्मसभाओं में भक्ति या कृष्ण पर व्याख्यान देते हुए उनके मुख से जितने शब्द निकलते थे सभी आंसुओं में तरबतर होते थे। अपने आध्यात्मिक उत्कर्ष की इस अवस्था में वे कहा करते थे, कि अनेक बार जागृत दशा में ही ज्ञान ध्यान में, बिना किसी प्रकार का अन्तर पड़े मैंने मेघवर्ण कृष्ण को कालीनाग के मस्तक पर नाचते और बंशी बजाते देखा है। बाद को वे कहा करते थे "यह मन की एकाग्रता की विशेष अवस्था थी, मेरी ही कल्पना की साकारता के, मेरे ही मन के उतावलेपन के सिवाय यह और कुछ भी नहीं था"।

वे जन्म के संन्यासी थे। छात्रावस्था में भी उनका जीवन घोर दीनताजनित कठोर तथा दुस्सह कायक्लेशों, और अति भयंकर परिश्रमों, एवं भीरव यातनाओं में बीता। यहां तक कि, कभी २ निरन्तर कई २ दिन तक लगातार उन्हें भोजन नहीं नसीब होता था। आहार की कमी के साथ २ वे आधी

आधी रात तक पढ़ने में परिश्रम करते थे, और प्रायः गणित के प्रश्नों में ऐसे तन्मय हो जाते थे कि उन्हें घंटों का बीतना जान ही नहीं पड़ता था और सबेरा हो जाता था। भविष्य में उन्हें जैसा जीवन व्यतीत करना था, जान पड़ता है, जान बूझ कर वे उसके लिये अपने को प्रस्तुत कर रहे थे। अध्यापक होने के पूर्व ही असीम आत्मनिर्भरता, जिसे वे बाद में समतोल निश्चिन्तता कहते थे, प्रौढ़ विश्वास, कुछ गहरे मंतं, महान् इच्छाशक्ति, अपने और पर्य्यावेक्षित तथ्यों की मान्य बातों के संग्रह में यथार्थ, उनके विश्लेषण और तर्कशैली में शुद्ध, एवं परिणामों के निकालने में बिलकुल स्पष्ट तथा निर्भ्रान्त गणित शास्त्रीय मन का विकाश उन्हों ने अपने में कर लिया था। उन्हें पदार्थविज्ञान से प्रेम था और निपुण रसायनी तथा वनस्पतिशास्त्रज्ञ थे। तत्त्वविज्ञानशास्त्र में विकासवाद उनका विशेष विषय था। उन्हों ने समस्त पाश्चात्य और पूर्वीय दर्शन शास्त्रों का अपने ढंग से पूरा २ अध्ययन किया था। उन्हों ने शंकर, कणाद, कपिल, गौतम, पातञ्जलि, जैमिनि, व्यास और कृष्ण के ग्रन्थों के साथ २ कांट, हेगल, गेटे, फिक्टे, स्पिनोज़ा, कोंट, स्पेंसर, डार्विन, हैकेल, टिंडल, हक्सले, स्टार, जार्डन, और अध्यापक जेम्स के ग्रन्थों में भी पारदर्शिता प्राप्त की थी। फारसी, अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, और संस्कृत साहित्यों के पूरे पण्डित थे। ई० १९०६ में उन्हों ने चारों वेदों का अध्ययन किया था और प्रत्येक मंत्र के पूर्ण ज्ञाता थे। वैदिक ऋचाओं के प्रत्येक शब्द का विश्लेषण वे शब्दशास्त्री की तीखी शुद्धता से करते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने को विलक्षण विद्वान बना लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी आयु के तैतीस वर्षों के प्रत्येक क्षण का उन्हों ने अत्यन्त सदुपयोग किया था। अपने

अन्त समय तक वे कठोर परिश्रम करते रहे। अमेरिका में दो वर्ष के प्रवास काल में, सार्वजनिक कार्यों में घोर श्रम करते हुए भी, प्रायः समस्त अमेरिकन साहित्य उन्हों ने पढ़ डाला।

संसार के सब ग्रन्थकारों, साधुओं, कवियों, और परम-भक्तों के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करते समय वे एक अद्भुत रसिकता का परिचय देते थे। उनकी अनोखी तथा निष्पक्ष आलोचना में किसी प्रकार का पाण्डित्य प्रदर्शन, बनावटी अभिमान की नाम मात्र की भी छाया, अथवा कोई निस्सार बात नहीं होती थी। बात चीत करते समय वेद से लगाकर किसी नवीन से नवीन मौलिक पंक्ति तक का जो विचार उनके दिल पर चुभ जाता था, वह यथायोग्य उनके विचारों के समर्थन में सहायक ही होता था तथा उन्हीं का अनुभूत सत्य उसे प्रकट करना पड़ता था। वे अत्युच्च कोटि के विद्वान, तत्वज्ञ, और ब्रह्मवादी थे। मेधाशक्ति के विकाश साथ ही वे अपने आध्यात्मिक उत्थान को बड़े ऊंचे शिखर तक पहुँचा सके थे। जनाकीर्ण लाहोर अब उनकी आत्मा के विस्तारों को संतुष्ट कर सकने में असमर्थ होता था। जो कुछ समय उन्हें मिलता था, वे उपनिषदों के रहस्यों और प्राचीन आर्यब्रह्मविद्या पर मनन करते हुए हिमालय की पहाड़ियों तथा जंगलों में बिताते थे।

हृषीकेश के निकट, ब्रह्मपुरी के घने वन में स्वामी राम का अभीष्ट सिद्ध हुआ था—उन्हें आत्मा का साक्षात्कार हुआ था। यही वह स्थान है जहां उन्हें मन की उस भयातीत आनन्दमय अद्वैतावस्था की प्राप्ति हुई थी, जिसमें न खेद है और न मोह। विश्वात्मा को ही जब कोई अपना स्वयं समझने लगता है तब अखिल विश्व उसके शरीर का काम देता है।

अपने इस महान नियम के प्रचारण के लिये तथ्यों का संग्रह उन्होंने यहीं किया था। समस्त पौर्वात्य स्वप्नदर्शकों और योगियों के वे प्रकृत शिरमौर और अध्यात्मवादी ही नहीं थे, किन्तु शारीरिक व्यायाम के भी बड़े भारी पक्षपाती थे।

वे अपने आप ही में एक विश्व ब्रह्माण्ड थे। उनके नगर तेजोमय थे। उनकी गलियों में बुद्ध अब भी अपना भिक्षा-पात्र लिये घूमते थे और ईसा सत्य का प्रचार करते थे। राम के मन-आकाश में कोई महापुरुष पञ्चत्व को नहीं प्राप्त हो सकता था। वे ऐसे अमरप्राण थे कि मृत भी वहां पहुंच कर जी उठते थे। इस तेजोमय मन के क्षितिज में सत्य का प्रकाश स्पष्ट था। उनके प्रकाश के कौंधों के सामने जो कोई मनुष्य बड़प्पन और शक्ति तथा चमत्कार बुद्धि का ढोंग रचता था उसके हाथ अपनी योग्यता से अधिक कुछ भी नहीं लगता था। श्रुतियां और स्मृतियां, पद्य और गीत, विचार और पदार्थ, तत्वज्ञान और धर्म की समस्यायें, राज-नीति और समाज सब साथ ही उनके दैवी प्रकाश में रेलमपेल करते थे और राम के ज्ञान के वस्त्र पहने हुए मनोहर सौंदर्य धारण करके बाहर निकलते थे। वायुमण्डल, आस-पास, और संगति का पूरा प्रभाव पड़ता है, यहां तक कि मनुष्य की आकृति तक बदल जाती है। जलवायु का प्रभाव पड़ने पर उसके मुखमण्डल की ज्योति तक में लक्षणीय अन्तर पड़ जाता है। कोई भी भावना, कोई भी समस्या, कोई भी साधारण विचार, राम का स्पर्श होते ही, उनकी अन्तरात्मा के रहस्यमय प्रभावों से परिवर्तित होकर नये स्वरूप में दर्शन देता था। जब वे ब्रह्मचर्य पर बोलते थे, तब विषय का हमें उसी प्रकार एक नये प्रकाश के साथ उपदेश होता था, जिस प्रकार पहाड़ हमें विलक्षण प्रभापूर्ण दिखाई देता है, जब

बालरवि उसके पीछे होता है। यज्ञ, प्रेम, धर्म, आत्मानुभव, आत्मविकास पर उनके निबन्ध पढ़िये, हमें विदित होता है कि जैसी व्याख्या उन्होंने की है, वैसी न तो दूसरे किसी ने की है और न कर ही सकता था। देशभक्ति और उसके सिद्धांत का सम्पादन क्या उन्होंने अनोखा नहीं किया है? मैं शपथ कर सकता हूं कि, वे सूर्य या चन्द्रमा के प्रकाश से तुमको, मुझको, उसको, या इसको कदापि नहीं देखते थे। वास्तव में, न सूर्य को और न चन्द्र को ही वे उनके प्रकाश से देखते थे। वे वस्तुओं को अपनी आत्मा की ज्योति से देखते थे, अतएव उनके लिये अपने से परे कोई भी पदार्थ नहीं था। वे प्रकट में कहते थे, सूर्य की आरक्त किरणें मेरी नसें हैं। कोई भी वस्तु उनकी दृष्टिपथ में पड़ी कि उन्हों ने परमात्मा से उसे पहनाया और फिर उनको परमात्मा के सिवाय कुछ भी नहीं दिखाई पड़ता था। उन्हों ने प्रकृति से एक विचित्र नाता जोड़ लिया था। उनका मुस्कयाना वर्षाऋतु में सूर्य का मेघयुक्त होना, और रोना गर्मी की ठीक दोपहर में जलवृष्टि थी। मेघ उनके शिर पर छाया रखते थे, छत्री की उन्हें आवश्यकता नहीं थी। वे विकट बनों में रहते और निस्तब्ध रात में मार्ग-शून्य बीहड़ नालों में इस सुगमता से विचरते थे मानों आकाश में चिड़िया उड़ रही हो।

वे कवियों में भी कवि थे। पहाड़ी नदी का नाद उनके लिये यथेष्ट संगी था। उनके लिये पक्षी, वृक्षों की छाया के नीचे प्रकृति के रहस्यों का वर्णन करते थे। विश्व-संगीत उन्हें सुनाई देता था। और उनके परमप्रिय कृष्ण ही विश्व-ब्रह्माण्ड तथा मूर्तिमान विश्व-नृत्य और विश्व-समाधि थे। समुद्र की थिरकती हुई लहरों में, बनों के (वृक्षों के) डोलने में जंगल की निर्जनता में उन्हें सार्वभौम सौन्दर्य दिखाई देता

था। प्रकृति माता की आत्मा से एकता को ही वे वास्तविक आचरण समझते थे। किसी मनुष्य को इस केन्द्र में बैठा दो फिर उसे किसी की आवश्यकता नहीं। मनुष्य और सदाचार के सर्वोत्तम स्वार्थों को उसके पास सुरक्षित समझिये। मनुष्य वहीं गढ़े जा सकते हैं, न कि विद्वत्ता और पाण्डित्य के पुतलीघरों में। मनुष्य को वहां बैठ कर अपनी वास्तविकता के दर्शन, भर कर लेने दीजिये फिर निश्चय रखिये, वह अपनी अचलता और अजेयता की चट्टानपर खड़ा होगा। "मुझे आघात पहुंचाने को कोई बाहरी शिला नहीं है"। अनुभव ही धर्म है। यह अनुभव, कि मेरी आत्मा ही वह शक्ति है, जो अखिल विश्व को अनुप्राणित करती है और जड़ तथा चेतन की प्रत्येक नस की गुप्त शक्ति है, प्रत्येक साधारण मनुष्य को भी उन महाविजयों के राजमार्ग पर डाल देता है जो मनुष्य के लिये सम्भव हैं। उसकी सब सफलताओं का यही मूल मंत्र है। व्यावहारिक ब्रह्मविद्या के मन्दिर के उपासकों के सिवाय किसी का भी हृदय शुद्ध, मुखमण्डल प्रभापूर्ण, और स्वभाव हंसमुख नहीं हो सकता। मेरी ब्रह्मविद्या कोई धर्ममत नहीं है, न सिद्धान्त ही है, बल्कि जीवन के सर्वकालीन अनुभव से श्रेष्ठ बुद्धिमानों द्वारा स्थिर किये हुए परिणामों का समूह है।

उन्हों ने प्रकृति में ही सर्वश्रेष्ठ मानवीय काव्य पढ़ा था और उनकी आत्मा की अग्नि को शीतल हिम और पहाड़ी दृश्यों के विस्तार के सिवाय कौन बुझा सकता था। किसी घर में उन्हें अच्छा नहीं लगता था। सब से अधिक सुखी वे तभी होते थे जब हिमालय के जङ्गलों में नेत्रों को आधा बन्द किये हुए विचरते थे और सर्वाधिक शक्तिशाली पर्वत राज की ओर कनाखियों से देखते थे।

वे अपने समय के वेदान्त के एक बहुत बड़े प्रचारक थे। वे समस्त हिन्दू धर्म ग्रन्थों का निदर्शन थे। सकलश्रेष्ठ विश्वात्मा हिन्दू जीवनों के वे प्रतिनिधिक गौरव थे। बुद्ध धर्म के वे महान् व्याख्याता थे। पूर्ण सदाचार, आमूल संयम, धर्मसङ्गत आचरण के वे प्रचारक थे और अध्यात्म विद्या को मानव चरित्र का उपयुक्त पथ प्रदर्शक बताते थे। उच्च कोटि का परोपकार उनके अन्तःकरण का साधारण स्वभाव था। वे दिन रात कार्य और श्रम में लगे रहते थे किन्तु अपना एक क्षण भी हिन्दू जनता की दशा सुधारने में नहीं नष्ट करते थे। उनका कथन था:—"केवल एक रोग है और एक दवा। राष्ट्र धर्म केवल संगत जीवन से नीरोग और स्वाधीन किये जा सकते हैं। उसी से व्यक्ति, ऋषि और देवों से भी बढ़कर बनाये जा सकते हैं। ईश्वर में जियो, सब ठीक है; दूसरों को ईश्वर में जीनेवाला बनाओ, और सब ठीक हो जाँयगे। इस सत्य पर विश्वास करो, तुम्हारी रक्षा होगी; इसका विरोध करो, तुम कष्ट पाओगे"। वे अपने श्रम के लिये कोई पुरस्कार नहीं चाहते थे। अमेरिका से लौटते समय उन्होंने वहां के अपने कार्य के प्रशंसात्मक कागज पत्रों की गठरी समुद्र में फेंक दी थी। अपनी मातृ-भूमि की ओर से अमेरिका में जो कार्य उनसे हुआ था उस का ब्यौरा केवल एक बार अमेरिका जाने ही से प्रकट होगा। अन्त में यह कहा जा सकता है कि ऐसे अग्रगामी मेधावियों का आगमन इस संसार में अल्प काल के ही लिये होता है। वे अपने उपाय को पूरा करने को नहीं, दूसरों को राह सुझाने के लिये आते हैं। बिजली की चमक की तरह उनका कार्य केवल संकेतात्मक होता है, पूर्ति करनेहारा कदापि नहीं। वे मनुष्य को राह दिखाने वाले, कुछ सूत्र बताकर चम्पत हो

जाते हैं। इस प्रकार का प्रत्येक मेधावी महापुरुष अपने जन्म-समय में आवश्यक कुछ साधक शक्तियों का केन्द्र होता है। वे अपने विशिष्ट ढंग से मनुष्यों का प्रेम अपनी ओर खींच लेते हैं और जब लोग उन पर निर्भर करने लगते हैं, तब वे लोगों को बड़ी ही व्यग्रता की दशा में छोड़ कर चल देते हैं कि वे (लोग) अपने पैरों पर खड़े हों और अपनी ही शक्ति से काम लें।

आन्तरिक मनुष्य की एकता का स्वामी राम का सिद्धान्त, भारत के नाम से परिचित इस छोटे संसार के समस्त विरोधी धर्मों और सम्प्रदायों का निस्संदेह बड़ा अपूर्व समन्वय है। उनकी प्रेम की शिक्षा राष्ट्रीय और व्यक्तिगत उद्योगशक्ति का अपव्यय रोकने की दवा है, और इस प्रकार कार्य और कार्य-शीलता की मात्रा बढ़ाती है। पदार्थ विज्ञान और धर्म में छिटके हुए समस्त सत्य का संयोगरूप उनका चरित्र नित्य मानवीय आचरण के लिये आदर्श है। सार्वजनिक कार्य-विषयक उनका एक मात्र विचार जनता की अनभिज्ञता और दासता से मुक्ति था। उनका व्यक्तित्व स्वाधीनता और बन्धन मोक्ष का आकाशी दीपक था। उनकी रचना है:—

सकहि हमहिं को क्षति पहुँचाई, करै पूर्ति अस नहिं क्षमताई।
सकै मनाय हमैं को भाई, कुपित करै नहिं यह मनसाई॥

हटत देख मोहि जग एक ओरा, छोडन हित शुभ मारग मोरा।
जग मग ज्योति हमारे आवत, सगरी छाया आप परावत॥

सुन सागर अब मोर अवाई, बीच फाटि करु मारग भाई।
अथवा जर भुनि बन जा छारा, भगे बिना नहिं तव निस्तारा॥

सुनहु कान दै भूधर मोरी, मारग त्यागि हटहु एक ओरी।
कुशल नहीं नतु तुमरी आजू, गरद मिलहि सब अस्थि समाजू॥

सेनानायक नृपति सब मम क्रीडा के लाल।
बहिया है यह बन्हि की भाग बचहु बेहाल॥

पारिषद हु अरु साचिव समाजा, बकहु व्यर्थ कृपया नहीं आजा।
अवशि करहु मम आज्ञा पालन, काल करहु भक्षण दुहुँ गालन॥
पवन जाइ गरजहु अति घोरा, कूकुर मम भूकहु बरजोरा।
आंधी चलहु भयंकर भारी, भोरि दुंदुभी बजहु सुधारी॥
पवन प्रचण्ड हमारो बाहन, अन्धड चढे चलत हम राहन।
है बिजली बन्दूक हमारी, लक्ष्य न चूकत हौं गुणधारी॥
मनो अहेरी पाछे धावत, करत कौर ज्यों ही धरि पावत।
गिरिवर गण के हृदय महन्ता, भूमि खण्ड औ जलधि अनन्ता॥

तोप शब्द घोषित करहु दूरि दूरि सब जाय।
भाग्य और देवन सबहिं रथ निज लेहुँ झुलाय॥

उठहु जगहु हे मीत त्यागि देहु माया सबल।
ॐ स्वाराज्य पुनीत जपहु सदा मानस बिमल॥

अपने ही तत्त्वज्ञान पर उनकी अन्तिम घोषणा इस प्रकार है:—

जड आलस को काम कह चलत बढत श्रम नेम।
बेमन की तजि चाकरी सुघर काज सो प्रेम॥

शंक के कीट भगाय के दूरि सुशान्त अलापन में मन राखें।
नित छोडि बिघातन को बद रंग सुचारु सवारन को रस चाखें॥
हैं सांचे सुधारन के मद भीजे औ लीक की रीति को नाँव न भाखें।
बनावैं नहीं मुख सों बतियां लहरैं गहरी हियरे अभिलाखें॥

सांची बातैं जोरिकै काव्य करैं नव रंग।
त्यागी कल्पना डोरिको सेवत तथ्य पतंग॥

हम देते नाहि मृतन के ग्रंथन केर प्रमान।
तरकावलि घटनानकी सकल शास्त्रको प्रान॥

जीवित अनुभव घन घटा बरसौ तरक सुनीर।
करौ किनारे बांधिकै अवतरणन बेहीर॥

व्यावहारिक वेदान्त ।

महा वाक्य "अहं ब्रह्मास्मि" पर, व्यक्तियों और दलों पर ध्यानविस्तार तथा व्यग्रता से शून्य, मनन तथा एकाग्रता की स्वभावतः शक्ति, स्वाधीनता और प्रेम में परिणति होती है। शरीर के प्रत्येक रोम में लहराते हुए इस ब्रह्मत्व को, इस सपिण्ड अथवा प्रबल अद्वैत को, इस दैवी शक्तिदायक भक्ति को, इस प्रज्वलित प्रकाश को ही शास्त्र अचूक ब्रह्मशर कहते हैं।

हे डगमग, चंचल, संदिग्ध मनो! बेमन का धर्माचरण (कट्टरता) और अधर्माचरण अब छोड़ो! सब प्रकार का सन्देह और अगर मगर निकाल डालो, सब प्रत्यय तुम्हारी ही सृष्टि हैं। सूर्य चाहे पारे की थाली सिद्ध हो जाय, पृथ्वी पुटाकार या खोखला मण्डल भले ही प्रमाणित हो जाय, वेद सम्भव है पौरुषेय ठहराये जा सकें, किन्तु तुम ईश्वर के सिवाय और कुछ नहीं हो, और कुछ नहीं हो। तुम्हारे ईश्वरीय कण्ठ से निकलने वाली एक भी ध्वनि घास के डंठालों, बालू के कणों, धूलि के बिन्दुओं, हवा के झकोरों वर्षा के बूंदों, पक्षियों, पशुओं, देवताओं और मनुष्यों को ग्रहण करना पड़ेगी। गुफाओं और वनों पर यह गर्जेगी, झोपड़ियों और खेरों में घनघनायगी। नगरों और गलियों में यह गूँजेगी, नगरों से नगरों को जायगी, तथा समस्त संसार को परिपूर्ण करेगी और सनसना देगी। ओ स्वाधीनता! स्वतंत्रता!

किसी नदी के पहाड़ी सोतों को हिमशिलाओं की सुवर्ण राशियों से भर दो, फिर उस नदी की सब शाखायें, धारायें और नहरें खेतों को खूब सींचती हुई भरपूर बहेगी। जीवन के सोते को, प्रेम के मूल को, हर्ष और प्रकाश के झरने को,

अनन्त शक्ति और पवित्रता को, ईश्वरत्व को, तुच्छ स्वयं को आलिंगन और स्थानच्युत करने दो, विचारों को तरबोर करने दो, मन को परिपूर्ण करने दो, फिर हाथ, पैर, नेत्र ही नहीं, शरीर की प्रत्येक स्नायु, आस पास तक संगति के स्वर्ग की रचना करेंहींगे और शक्ति की बहिया को जगमगावेंहींगे।

सिंहासन पर महाराज की उपस्थिति मात्र से ही दरबार में व्यवस्था स्थापित हो जाती है । इसी प्रकार से मनुष्य के अपने ईश्वरत्व का, वास्तविक महिमा का आश्रय लेते ही समस्त जाति में क्रम और जीवन का सञ्चार हो जाता है ।

ऐ अल्प विश्वासियों ! जागो ! अपनी पवित्र महामहिमता का अनुभव करो ! और तुम्हारी राजकीय तटस्थता की एक निगाह, तुम्हारी दैवी निश्चिंतता की एक सैन रौरव नरकों को मनोहर स्वर्गों में बदल देने को यथेष्ट होगी ।

घर आ घर ! ओ, परिव्राजक ! ॐ ! ॐ !!

ऐ झकोरो ! चलो, ऐ पवनो ! इन शब्दों से मिल जाओ, जिनका उद्देश्य वही है जो तुम्हारा ।

आहा ! आनन्द ! आनन्द !! न घटने वाले हर्ष और हास्य !

स्वामी राम से जापान में किसी ने पूछा, आप का धर्म क्या है । उन्हों ने गेटे के शब्दों में उत्तर दिया :—

धंधो कहा नर को शुभ श्रेष्ठ बतावत बात सुनो यह साची ।
लोक पताल हुते नहिं एकहु सृष्टि जिती हम ही यह राची ॥
ऐंचि समुद्र सों ऊंचो कियो तब ज्योति दिवाकर की जगनाची ।
थे द्विजराज अपाहिज दीन वै भये गति शील हमैं पुनि जांची ॥

तो क्या सचमुच राम की मृत्यु हो गई ? वह राम, जिन्हों ने अपने शरीर के विसर्जन के कुछ ही क्षणों पूर्व लिखा था :—

" ब्रह्मा, विष्णु, शिव, इन्द्र, गंगा, भारत ! ऐ मौत ! बेशक उड़ा दे इस एक १ जिस्म को। मेरे और २ अजसाम ही मुझे कुछ कम नहीं। सिर्फ चांद की किरणें, चांदी की तारें पहन कर चैन से काट सकता हूं। पहाड़ी नदी नालों के ३ भेस में गीत गाता फिरूंगा। ४ बहरे मव्वाज के ५ लिबास में मैं ही लह-राता फिरूंगा। मैं ही ६ बादे खुश खराम, ७ नसीमे मस्ताना गाम हूं। मेरी यह ८ सूरतें सैलानी हर वक्त ९ रवानी में रहती है। इस रूप में पहाड़ों से उतरा, मुरझाते पौदों को ताजा किया। १० गुलों को हंसाया, बुलबुल को रुलाया, दरवाजों को खटखटाया, सोतों को जगाया, किसी का आंसू पोंछा, किसी का घुंघट उड़ाया। इसको छेड़, उसको छेड़, तुझको छेड़। वह गया, वह गया। न कुछ साथ रक्खा, न किसी के हाथ आया। " *

(स्वामी राम के देह विसर्जन के थोड़े ही दिनों के बाद स्वामी जी के परम भक्त मि० पूर्णसिंह ने यह संक्षिप्त जीवन चरित वर्त्तमान पत्रों के लिये लिखा था, जिसका यह आव-कल अनुवाद है।)

---

* यह लेख मूल उर्दू में लिखा है, किन्तु यहां यथाशब्द इस लिये रक्खा है कि उर्दू से परिचित हिन्दी वाचक वर्ग इसकी मूल भाषा से आनन्द ले सकें। अन्य पाठकों को हिन्दी शब्दों की टिप्पणी से स्पष्टार्थ हो जायगा।

१ शरीर. २ शरीर. ३ वेष. ४ लहरें मारता हुआ समुद्र. ५ पोशाक. ६ आनन्द से बहता हुआ पवन. ७ मस्ती से मटकता हुआ वायु. ८ सैर करने वाली मूर्त्ति. ९ चलती फिरती रहती है. १० पुष्प.

एक आदेश ।

" तुम मुझे समझना चाहते हो तो मैं शपथ दिला कर कहता हूं कि, इस पुस्तक में या अन्य कहीं जो विचार मैंने लिखे हैं और मेरा यह शरीर जो कभी प्रारब्धवश युद्ध में तुम्हारे सामने आ जाय, कुचल कर नाश कर दो । मैं तुम्हें विश्वास देकर शपथ कराता हूं कि, डरो मत । उनका ऐसा नाश करो, जैसा मैं स्वयं तुम्हारे विचार और देह को नष्ट करने का प्रयत्न करूंगा । इसी से तुम मुझे अपने साथ अभेद रहने के लिये विमुक्त करोगे ।

मैंने जो कुछ लिखा है, उसमें से कुछ न रक्खो; उसकी कोई परवाह न करो; न उसमें विश्वास लाओ । रुको मत, जब तक कि दांतों में चबाते २ उसका मैदा न बन जाय । और मेरा चेहरा देखते हुए मैं जो कुछ करूं या कहूं, उसे कभी गृहण न करो, क्योंकि उसके गृहण करने की कोई आवश्यकता ही नहीं । जब तुम इन सब बातों को जुदा कर छोड दोगे, तभी मुझ अकेले —एकमेवाद्वितीयम् — के दर्शन पाओगे, और फिर कभी त्याग नहीं होगा ।

स्वामी राम की एक नोटबुक से उद्धृत ।

स्वामी रामतीर्थ।

सान्त में अनन्त।

ता० १० जनवरी १९०३ को अमेरिका के सैन फ्रांसिस्को नगर में दिया हुआ व्याख्यान।

महिलाओं और सज्जनों के रूप में अनन्त स्वरूप!

विषय पर आने के पूर्व, साधारणतः संसार जिस प्रकार के श्रोता जुटा दिया करता है, उसपर कुछ शब्द कहना है। साधारणतः लोग अपने कानों से नहीं सुना करते, दूसरों के कानों से सुनते हैं। वे अपनी आंखों से नहीं देखते, अपने मित्रों के नयनों से देखते हैं। वे अपनी रुचि से काम नहीं

लेते, दूसरों की रुचि से काम लेते हैं। कैसा बेतुकापन है! संसारी मनुष्यों! हर मौके पर अपने कानों और अपने नेत्रों से काम लो। हर अवसर पर अपनी ही समझ काम में लाओ। तुम्हारी अपनी आंखें और कान बेमतलब नहीं हैं, वे व्यवहार के लिये हैं।

राम एक दिन सड़क पर जा रहा था। एक भलेमानुस ने आकर कहा, "यह पोशाक तुम किस अभिप्राय से पहनते हो? ऐसी पोशाक तुम क्यों पहनते हो? तुम हमारा ध्यान क्यों खींचते हो?" राम सदा मुसकराता और हंसता है। यदि भारतीय साधुओं के पहनावे से आप प्रसन्न होते हैं राम को आप की प्रसन्नता से आनन्द है। यदि यह पोशाक आपके हर्ष और हास्य का कारण होती है, हमें आप की मुस्कराहटों से सुख प्राप्त होता है। आप का मुस्कुराना हमारा मुस्कुराना है।

किन्तु, कृपया समझदार बनिये। समाचारपत्रों ने किसी की प्रशंसा या विरोध में एक शब्द लिख दिया कि, सारे समाज के विचार वैसे ही हो जाते हैं। लोग कहने लगते हैं, समाचारपत्र ऐसा कहते हैं, समाचारपत्र वैसा कहते हैं। समाचारपत्रों के मूल में क्या है? साधारणतः लड़के और नारियां समाचारपत्रों के लिये समाचार संग्रह करती हैं। सब सामग्री चौथी और कभी कभी दसवीं श्रेणी के सम्वाद-दाताओं से मिलती है, न कि विद्वान आलोचकों से। यदि नगरनायक, एक मनुष्य, किसी की प्रशंसा करने लगता है, यदि एक ऐसा मनुष्य, जो बड़ा आदमी समझा जाता है, किसी आदमी का आदर करने लगता है, तो सबके सब उसी एक मनुष्य की ध्वनि को दोहराने और प्रतिध्वनित करने

लगते हैं। यह स्वतंत्रता नहीं है। स्वाधीनता और स्वतंत्रता का अर्थ है, हर मौके पर अपने कानों को काम में लाना, हर मौके पर अपनी आंखों का उपयोग करना।

जिस मनुष्य ने यह पोशाक पहनने का कारण पूछा था उससे राम ने कहा, "भाई, भाई, यह तो बताओ कि इस रंग के कपड़े क्यों न पहनना चाहिये और किसी दूसरे रंग के पहनना चाहिये ! राम काला अथवा सफेद रंग इसके स्थान में क्यों पहने ? कृपया कारण बताइये। कोई बुराई बताइये। आप क्या दोष पाते हैं ?" वह कोई दोष न बता सका। उसने कहा, "यह रंग भी उतनाही सुखद है जितना मेरा। तुम्हारा यह कपड़ा भी सर्दी और ताप से तुम्हारी वैसी ही रक्षा करता है जैसा कि मेरा। यह रंग भी उतनाही अच्छा है जितना कि कोई दूसरा, और चाहे जौनसा कपड़ा पहना जायगा, वह किसी न किसी रंग का होहीगा। वह काला, सफेद, गुलाबी कैसा भी है, कोई न कोई रंग अवश्य रखता है। एक न एक रंग का होने से वह बच नहीं सकता"।

अब आप बतावें कि, इस रंग में आप क्या ऐब समझते हैं। वह कोई दोष न कह सका। तब राम ने उससे कहा, "अपने ऊपर कृपा कीजिये, अपनी आंखों पर कृपा कीजिये, अपने कानों पर कृपा कीजिये; अपने नेत्रों और कानों से काम लीजिये, तब निर्णय कीजिये; दूसरों की सम्मतियों के द्वारा न फैसला कीजिये। दूसरों के मतों के चेरे मत बनिये। दूसरों के चेरे होने की कमज़ोरी से मनुष्य जितना अधिक बचा हुआ है, उतनाही अधिक वह स्वाधीन है"।

राम की इच्छा है कि इन व्याख्यानों को सुनने में आप अपने कानों और बुद्धियों से काम लें। अपना मत स्थिर

कीजिये। यदि ठीक तरह पर आप इन व्याख्यानों को सुनेंगे तो, राम वचन देता है, आप को बड़ा लाभ होगा। आप सब चिन्ता, भय और क्लेशों से छूट जाँयगे।

आप जानते हैं, लोग कहते हैं कि वे धन चाहते हैं। महाशय! आप धन किस लिये चाहते हैं? आप आनन्द के लिये ऐश्वर्य्य चाहते हैं, और किसी लिये नहीं। ऐश्वर्य्य से आनन्द नहीं मिलता। यहां एक ऐसी वस्तु है, जिससे आप को आनन्द मिलेगा। कुछ कहते हैं, हम ऐसे व्याख्यान सुनना चाहते हैं, जो मर्मस्पर्शी हों, जो हमारे दिलों में गड़ जाँय, अर्थात् हम ऐसे व्याख्यान चाहते हैं, जो प्रत्यक्ष और तुरन्त प्रभाव पैदा करने वाले हों। बच्चे मत बनो। बच्चे को एक सोने का सिक्का और एक मिसरी का टुकड़ा दिखाइये बच्चा तुरन्त मिसरी का टुकड़ा लेलेगा, जो तुरन्त मिठास का प्रभाव पैदा करता है। वह सोने या चांदी की मुद्रा न लेगा। बच्चे मत बनिये।

कभी २ व्याख्यानों और वक्तृताओं का तुरन्त प्रभाव पड़ता है। किन्तु वे मिसरी के से हैं, उनमें टिकाऊ और स्थायी कुछ भी नहीं है। यहां एक ऐसी वस्तु है, जो आप पर अत्यन्त टिकाऊ और अत्यन्त स्थायी प्रभाव डालेगी। विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में, लोग घंटों लगातार शिक्षकों और अध्यापकों के उपदेश सुनते हैं। अध्यापक किसी प्रकार की वक्तृत्व-शक्ति नहीं प्रकट करते और न अलङ्कारविद्या के नियमों का पालन करते हैं। अध्यापक साधारणतः अपने विद्यार्थियों को धीरे धीरे, शान्त भाव से, अटकते हुए उपदेश देते हैं। किन्तु, अध्यापक में तुरन्त प्रभाव उत्पन्न करने की शक्ति हो या न हो, विद्यार्थियों को उसके मुख से निकले हुए प्रत्येक शब्द को

ग्रहण करना पड़ता है।

उसी प्रकार राम आज संसार को उपदेश देता है। संसार को उसके शब्द उसी भाव से सुनना चाहिये, जिस भाव से महाविद्यालय के विद्यार्थी अपने अध्यापकों की बातें सुनते हैं। आप ये अभिमान की बातें समझेंगे। किन्तु वह समय आ रहा है जब.................*

आज के विचार का विषय है सान्त में अनन्त अर्थात् परिच्छिन्न में अपरिच्छिन्न। तत्त्वशास्त्र और ज्ञान को लोकप्रिय बनाना बड़ी ही कठिन बात है। किन्तु सुकरात कहता है, और उसका कथन बिलकुल ठीक है, कि "ज्ञान ही नेकी है"। यही भाव अन्त में मानव जाति पर शासन करेगा। ज्ञान ही मानव जाति पर शासन करता है, ज्ञान ही कार्य का रूप धारण करता है। लोग पहले से तैय्यार काम चाहते हैं, परन्तु पहले से तैय्यार काम टिकाऊ न होगा राम तुम्हें ऐसा ज्ञान दे रहा है, जो तुम्हें कर्म की अनन्त शक्ति में बदल देगा।

इसे लोकप्रिय बनाना कठिन है। इस कठिन और गूढ़ समस्या को यथासम्भव सरल बनाने का हम भरसक उद्योग करेंगे।

इस संसार की जो छोटी चीज तुम्हारी धारणा में आ सकती है, जो छोटे से छोटी वस्तु आप इस संसार में देखते हैं, उससे हम आरम्भ करेंगे। पोस्ते का बीज कह लीजिये, अथवा सरसों का मान लीजिये, अथवा कोई दूसरा बीज

---

*यहां पर राम बिलकुल मौन हो कर इस विचार में डूब गये कि एक दिन समस्त संसार आध्यात्मिक जीवन के सोते से जीभर अमृत पीने को बाध्य होगा, और जो ध्येय वे बता रहे थे वही मनुष्य मात्र का लक्ष्य होगा।

जो आप के मन माने, कोई छोटा बीज हो। वह बहुत ही छोटा है। उसे अपनी हथेली पर रखिये। बीज कौन है? जिसे आप अपने सामने देख रहे हैं, अथवा सूँघ रहे हैं, या तौलते हैं, या जिसे आप छू सकते हैं, क्या यही बीज है? क्या वह नन्ही सी चीज़ बीज है? अथवा बीज कोई दूसरी ही चीज़ है? आओ, परीक्षा करें।

इस बीज को जमीन में बो दो। बहुत ही थोड़े समय में बीज अंकुरित होकर सुन्दर, कल्ले निकालता हुआ पौधा हो जाता है, और उस पहले मूल बीज से हमें फिर यथा समय हजारों बीज मिलते हैं। इन दूसरे हजारों बीजों को बो दीजिये और उसी तरह के लाखों बीज हमारे हाथ लगते हैं। इन लाखों बीजों को बो दीजिये, उसी तरह के करोड़ों बीज हम पा जाँयगे। इस चमत्कार से क्या ध्वनित होता है? मूल बीज, पहला बीज, जिससे हमने शुरू किया था, वह अब कहां है?

वह भूमि में नष्ट होगया, पृथिवी में मर गया। वह अब देखने को नहीं मिल सकता। किन्तु उस मूल बीज से आज हमें उसी तरह के करोड़ों और अरबों बीज प्राप्त हैं। ओह! उस प्रारंभिक, मूल बीज में, जिससे हमने श्रीगणेश किया था, कैसी अनन्त शक्ति, सामर्थ्य, कैसी अनन्त योग्यता गुप्त या सुप्त थीं।

अब फिर प्रश्न होता है। यह एक बीज है, यह पोस्ते या सरसों का छोटा सा बीज है, आपके इस कथन का अभिप्राय क्या है, इस वाक्य से आपका मतलब क्या है? क्या आपके अनुसार बीज शब्द का अर्थ केवल उसकी आकृति, परिमाण, तौल और गन्ध है? क्याबीज रूप से वास्तव में

रूपों के बाहरी केन्द्रों का बोध होता है? नहीं, नहीं। असली बीज की तौल, रंग, वास और स्वाद का हम कृत्रिम बीज बना सकते हैं। किन्तु यह बनावटी बीज वास्तव में बीज नहीं कहा जा सकता, यह असली सच्चा बीज नहीं कहा जा सकता, यह केवल पुतला होगा, लड़कों के खेलने की चीज़ होगी, नकि बीज। इस प्रकार हम देखते हैं कि बीज शब्द का एक जाहिर अर्थ है, और एक असली अर्थ भी। बीज शब्द का बाह्य अर्थ है, रूप, परिमाण, तौल, जिन गुणों को हम अपनी इन्द्रियों से जान सकते हैं। किन्तु बीज शब्द का असली अर्थ है, अनन्त शक्ति, अनन्त सामर्थ्य, अनन्त क्षमता, जो बीज रूप में छिपी हुई है। अब हमें सान्त में अनन्त दिखा देता है। सान्त रूप या आकृति में अपार सामर्थ्य, अनन्त शक्ति छिपी हुई है, और बीज शब्द का असली अर्थ है, उसका भीतरी अनन्त, नकि उसका बाह्य या बाहरी रूप; यह नहीं।

रूप या आकृति की मृत्यु के साथ क्या इस अनन्त शक्ति का नाश होजाता है? बीज-रूप मृत्यु को प्राप्त होता है, बीज-रूप या प्रकट बीज पृथ्वी में नष्ट हो जाता है, किन्तु क्या असली बीज अर्थात् भीतरी अनन्त भी नाश को प्राप्त होता है? नहीं, नहीं, बिल्कुल नहीं। अनन्तता की मृत्यु कैसे हो सकती है? उसका नाश कभी नहीं होता। आज हम वह बीज लेते हैं, जो, मान लीजिये, प्रारम्भिक बीज की हजारवीं सन्तति है। इस बीज को हम उठाते हैं। इसे फिर बोइये, इसे फिर भूमि में रोपिये। आप देखेंगे कि इसमें भी बाढ़ की वही अनन्त शक्ति मौजूद है, जो प्रथम बीज में थी। मूल बीज की दसलखीं सन्तति में भी वही अनन्त क्षमता और शक्ति

वर्तमान है, जो मूल बीज में थी।

हम देखते हैं कि बीज शब्द का वास्तविक अर्थ, जो भीतरी अनन्तता है, प्रथम बीज का भी वही था जो प्रथम बीज की हजारवीं सन्तति का है। और यह अनन्तता प्रथम बीज की पद्मवीं पीढ़ी में भी समान बनी रहेगी। इससे हमें पता चलता है कि अन्तर की अनन्तता, अनन्त शक्ति या सामर्थ्य नित्य, निर्विकार है, और हम यह भी देखते हैं कि वास्तविक बीज, अनन्त शक्ति, अनन्त सामर्थ्य का नाश नहीं होता। मूल बीजरूप नष्ट हुआ, परन्तु शक्ति नहीं नष्ट हुई। शक्ति फिर सहस्रवीं पीढ़ी के बीजों में अपरिवर्तित, बेबदली प्रकट होती है। सच्ची अनन्तता बीज के देह की मृत्यु के साथ, बीज के रूप के नाश के साथ नष्ट नहीं होती। मैं कहूंगा, बीज की मानों यह आत्मा, दूसरे शब्दों में, बीज की वास्तविक अनन्तता नाश को नहीं प्राप्त होती, यह बदलती नहीं, कल्ह, आज, और सदा यह ज्यों की त्यों बनी रहती है। पुनः आज हम जो बीज लेते हैं उनमें भी फैलाव और वृद्धि की अनन्त शक्ति वही है, जो प्रथम बीज में थी। यह बदलती नहीं, यह कल्ह, आज, और सदा एकसां रहती है। आज फिर हम जिन बीजों को लेते हैं उनमें भी फैलाव और वृद्धि की वही अनन्त शक्ति वर्तमान है, जो प्रथम बीज में थी। न तो वह जरा सा भी बढ़ती है, न घटती है।

हम देखते हैं कि बीज शब्द के असली अर्थ, मैं कहूंगा, बीज की आत्मा या तत्त्व, न बढ़ती है और न घटती है। संक्षेप में, असली बीज कल्ह, आज, और सदा एकसां है। वह अनन्त है। बीज-रूप अथवा बीज-रूप की देह के नाश के साथ २ उसका नाश नहीं होता। वह अविनाशी है,

[illegible] निर्विकल्प है इसमें कोई कमी या ज्यादती नहीं हो सकती। (पुनरुक्ति हुई हो तो राम को आप क्षमा करें, वह समझता है, कभी कभी पुनरुक्ति आवश्यक होती है।)

क्या आप जानते हैं कि लघु परमाणु, जिन्हें आप अति सूक्ष्म कीड़े कह सकते हैं, कैसे बढ़ते हैं? कलल* का, जिसे लघुतम या प्रारम्भिक जन्तु भी कभी २ कहते हैं, प्राथमिक विकास कैसे होता है? पदार्थ विज्ञानियों (नैचुरलिस्ट्स naturalists) की भाषा में परमाणुओं की वृद्धि दो समान खण्ड होने से होती है। यह खण्डन प्राकृतिक नियम से होता है। हम भी ऐसा कर सकते हैं। इन क्षुद्र परमाणुओं, लघु नन्हें कीड़ों में से एक ले लीजिये। किसी उत्तम, अति पैनी शलाका से (नश्तर) से इसके दो बराबर टुकड़े कर डालिये। इसकी क्या गति होगी? ओः! यह बड़ा निठुर कर्म है। यदि हम किसी मनुष्य को दो भागों में काट दें, यदि हम उसके शरीर में कटार भोंक कर दो टुकड़े कर डालें तो वह मर जायगा। किन्तु परमाणु को काट डालिये, वह मरेगा नहीं, दो हो जायगा कैसी अत्यन्त अद्भुत बात है! उसके दो टुकड़े कर डालिये और वह दो हो जाता है, दोनों बराबर बड़े। अब इन दोनों को लीजिये और काट डालिये। फिर हरेक के दो २ समान टुकड़े करिये और उनके मरने के बदले आप को चार जीते परमाणु उसी शक्ति और बल के प्राप्त होंगे, जो मूल परमाणु में थी। आपको चार मिलेंगे। इन चारों के बराबर के दो दो टुकड़े कर डालिये और चार को मारने के बदले आप उन्हें बढ़ा कर आठ बना देंगे। इसी प्रकार, जहां तक आप की इच्छा हो बढ़ाते चले जाइये। आप उनकी संख्या यथेच्छ बढ़ा सकते हैं। कैसा

*स्थूल शरीर का आदि रूप, अंडे के भीतर का सा अर्धतरल सफेद पदार्थ।

आश्चर्य्य है, कैसा आश्चर्य्य है !

वह देखिये, आपके सामने एक परमाणु का रूप, परमाणु का शरीर है। मैं परमाणु शब्द का उसके प्रकट अर्थ में व्यवहार कर रहा हूँ। प्रकट अर्थ केवल शरीर रूप, परिणाम, तौल, रंग, आकृति है। प्रकट परमाणु यही है। किन्तु वास्तविक परमाणु उसकी आन्तरिक शक्ति, अथवा बल, भीतरी जीवन है। यह है असली परमाणु। बाह्य परमाणु को मार डालिये, रूप को नष्ट कर दीजिये, किन्तु वास्तविक परमाणु अथवा आत्मा, आप इसे सार कह सकते हैं, मरती नहीं। वह मरती नहीं, वह ज्यों की त्यों बनी रहती है। शरीरों को काटते, शरीरों को नष्ट करते जाइये। शरीर की मृत्यु से वास्तविक आत्मा का नाश नहीं होता, उससे केवल रूप का नाश होता है।

वास्तविक देव, जो तुम हो, अमर है। परमाणु का मूल शरीर लाखोंगुना बढ़ाया जा सकता है बढ़ाकर कोटियों किया जा सकता है। और यह है अनन्त शक्ति, मूल परमाणु के शरीर में छिपी हुई। यही है सान्त में अनन्त ! परिच्छिन्न में अपरिच्छिन्न।

अब प्रश्न होता है, जब शरीर गुणित होते हैं, जब परमाणुओं के शरीर बढ़ते बहुसंख्यक होते जाते हैं, तब क्या वह आन्तरिक अनन्त शक्ति भी बढ़ती जाती है? अथवा वह घटती है ? नहीं, वह न तो घटती है न बढ़ती है। परमाणु के बाहरी प्रकट सान्तरूप के अन्तर्गत वास्तविक अनन्तता नहीं बदलती, वह बढ़ती नहीं, वह घटती नहीं, वह वही रहती है।

इस अद्भुत क्रिया की वेदांतसंगत व्याख्या एक उदाहरण

द्वारा की जाती है।

एक छोटा बच्चा था जिसको दर्पण कभी नहीं दिखाया गया था। आप जानते होंगे, भारत में, हिन्दुस्थान में छोटे बच्चों को दर्पण नहीं दिखाया जाता। यह छोटा बच्चा एक बार घिसल कर अपने पिता के कमरे में पहुँच गया। वहां फर्श पर एक दर्पण था, जिसका एक सिरा तो दिवाल में लगा हुआ था और दूसरा सिरा भूमि पर था। यह छोटा बच्चा शीशे के पास घिसल कर गया। अब देखिये! वहां उसने एक बच्चा, छोटा बच्चा, प्यारा छोटा बच्चा देखा। आप जानते हैं, बच्चे सदा बच्चों से आकृष्ट होते हैं। यदि आप के बच्चा हो और उसे साथ अपने मित्र के घर ले जाइये तो, आप जब अपने मित्र से बातचीत करेंगे, बच्चा तुरन्त उस घर के बच्चों से दोस्ती जोड़ लेगा। इस बच्चे ने आइने में अपने ही डील डौल का एक बच्चा देखा। वह उसके पास गया। जब वह दर्पणी बच्चे के पास खिसक रहा था तब दर्पणी बच्चा भी उसकी ओर बढ़ रहा था। वह खुश हुआ। उसने देखा कि दर्पण वाला बच्चा स्नेह दिखा रहा है, मुझे उतना ही चाहता है, जितना मैं उसे चाहता हूं। उनकी नाकें मिलीं। उसने अपनी नाक शीशे में लगाई और शीशे वाला बच्चा भी अपनी नाक उसकी नाक तक ले गया दोनों नाकों का स्पर्श हुआ। उनके ओठ मिले। उसने अपने हाथ शीशे पर रक्खे और शीशे वाले बच्चे ने भी अपने हाथ उसके हाथों की ओर बढ़ाये, मानों वह उससे हाथ मिलावेगा। किन्तु इस बच्चे के हाथ जब शीशे वाले हाथों पर थे तब शीशा गिर कर दो टुकड़े हो गया। अब बच्चे ने देखा कि शीशे में एक के बदले दो बच्चे हैं। दूसरे कमरे में बच्चे की

मां ने यह शब्द सुना। वह दौड़ कर अपने पति के कमरे में आई और देखा कि पति वहां नहीं है। किन्तु बच्चा कमरे की चीजों की गत बना रहा है और शीशा तोड़ डाला। वह इस तरह बिगड़ती और धमकाती हुई उसके पास गई कि मानों मारेगी। किन्तु आप जानते हैं, लड़के खूब समझते हैं। वे जानते हैं कि माताओं की धमकियां घुड़कियां और लाल पीली आंखें निरर्थक होती हैं। वे अनुभव से यह बात जानते हैं। "तूने क्या किया", "तूने क्या किया", "तू यहां क्या कर रहा है", माता के इन वाक्यों से बच्चा डरा नहीं। उसने इन शब्दों को घुड़की धमकी न समझ कर दुलार समझा। उसने कहा, "अऐ! मैंने दो कर दिये, दो बना दिये, दो बना दिये"। बच्चे ने एक बच्चे से दो बच्चे बना दिये। मूल में एक बच्चा था, जो दर्पण वाले एक बच्चे से बात चीत कर रहा था। अब इस बच्चे ने दो बच्चे बना दिये। एक छोटा बच्चा बालिग़ होने के पहले ही दो बच्चों का बाप होगया। उसने कहा, "मैंने दो बनाये हैं, मैंने दो बना डाले"। माता मुस्कराई और बच्चे को गोदी में लेकर अपने कमरे में चली गई।

दर्पण के ये दोनों खण्ड लीजिये। इन्हें तोड़िये, कसर न कीजिये, आपको अधिक दर्पण मिलेंगे। इन खण्डों को तोड़ कर चार खण्ड बनाइये, और आपको चार बच्चे मिलेंगे। शीशे के इन चार खण्डों को तोड़ कर आठ बनाने से छोटा बच्चा आठ बच्चों की सृष्टि कर सकता था। इस प्रकार से मनमानी संख्या में बच्चों की सृष्टि की जा सकती है। किन्तु हमारा प्रश्न है, क्या वह असली देव, क्या वह असली बच्चा शीशों के टूटने से बढ़ता या घटता है? वह न बढ़ता है

न घटता है। कमी और ज़्यादती केवल शीशों में होती है। दर्पण में आप जिस बच्चे को देखते हैं उसमें कोई अधिकता नहीं होती, वह ज्यों का त्यों बना रहता है। अनन्त कैसे बढ़ सकता है? अनन्तता यदि बढ़ती है तो वह अनन्तता नहीं है। अनन्तता घट कैसे सकती है? घटती है तो वह अनन्तता नहीं है।

इसी भांति, परमाणु के दो खण्ड होने की क्रिया की वेदान्तसंगत व्याख्या यह है। जब आप अति क्षुद्र कीड़े के दो समान खण्ड करते हैं तब शरीर, वह लघु शरीर, जो ठीक दर्पण के तुल्य है, ठीक शीशे के समान है, दो भाग होजाता है। किन्तु शक्ति, भीतरी वास्तविक अनन्तता, प्रकृत परमाणु, या सच्ची आत्मा या शक्ति, कोई भी नाम आप इसका रखलें, अथवा भीतर का सच्चा परमात्मा, परमाणु के दो भाग होने से विभक्त नहीं होता। परमाणु के शरीरों के गुणन के साथ २ असली परमाणु की शक्ति, अन्तर्गत देवत्व की वृद्धि नहीं होती। वह ज्यों का त्यों बना रहता है। वह असली बच्चे के समान है और परमाणु के शरीर दर्पण के टुकड़ों के सदृश हैं। जब परमाणु के शरीरों के भाग और उपविभाग और पुनः भाग होते हैं, निर्विकार अनन्त शक्ति अपना प्रतिबिम्ब डालती रहती है, अपने दर्शन देती रहती है, हजारों और करोड़ों शरीरों में अपने को समान भाव से प्रकट करती है। वह वही रहती है। वह केवल एक, केवल एक, केवल एक है, दो नहीं, बहु नहीं। ओ! महा आश्चर्य। कैसा आनन्द है! इस शरीर के दो भाग कर दो, इस शरीर को काट डालो किन्तु मैं मरने का नहीं। वास्तविक स्वयं, वास्तविक मुझे, सच्चा मैं नहीं मरता है। इस शरीर को

जिन्दा जला दो, इसे तुम्हारा जो जी चाहे करो, मुझे कोई हानि नहीं होती। अनुभव करो, अनुभव करो कि तुम भीतरी अनन्तता हो। यह जानो। जिस क्षण कोई मनुष्य अपने को भीतरी अनन्तता जान लेता है, जिस क्षण मनुष्य को अपनी वास्तविकता का ज्ञान हो जाता है, उसी क्षण वह स्वाधीन हो जाता है, सम्पूर्ण भय, कठिनता, यातना, कष्ट और व्यथा से परे हो जाता है। यह जानो, जो हो सो बनो।

ओ! यह कैसा आश्चर्यों का आश्चर्य है कि, वह एक ही अनन्त शक्ति है,जो अपने को सब शरीरों में,सब प्रकट व्यक्तियों में, सब प्रकट रूपों में प्रदर्शित करती है। ओः,वह मैं हूं,मैं,अनन्त एक, जो अपने को बड़े से बड़े वक्ताओं,महा पुरुषों,और घोर अभाग प्राणियों के शरीरों में प्रकट कर रहा हूं। ओः, कैसा आनन्द है! मैं अनन्त एक हूं न कि यह शरीर। इसका अनुभव करो और तुम स्वाधीन हो। ये केवल शब्द नहीं हैं। यह केवल काल्पनिक बातचीत नहीं है। यह सच्चो से सच्ची वास्तविकता है। सत्यतम वास्तविकता, प्रकृत शक्ति को, जो तुम हो, प्राप्त करो। तुम अनन्त हुए कि सब आशंकाओं और कठिनताओं से तुरन्त दूर हटे।

मान लो कि यहां संसार में सहस्रों शीशे हैं। कोई काला है, कोई सफेद है,कोई लाल है,कोई पीला है,कोई, हरा है। एक अनुकूल (Convex)है,दूसरा प्रतिकूल (Concave)। मान लो,कोई पहलदार है और कोई गरारीदार अर्थात् छोटी वस्तु को बड़ी अथवा बड़ी को छोटी दिखाने वाला है। सब तरह के शीशे हैं। एक मनुष्य खड़ा हुआ शीशा देखता है। वह चारों ओर दृष्टि डालता है। एक जगह वह अपने को लाल देखता है। लाल शीशे में वह अपने को लाल पाता है। दूसरी जगह वह अपने

को पीला पाता है, और तीसरी जगह वह अपने को काला पाता है। अनुकूल शीशे में वह अपनी आकृति विचित्र ढंग से विकृत देखता है। प्रतिकूल शीशे में वह फिर अपने को खूब हंसे जाने के योग्य विकृत देखता है। वह अपने को इन भांति २ के रूपों और आकारों में देखता है। किन्तु इन सब-प्रकट में, विभिन्न रूपों में एक अविभाज्य, निर्विकार, सर्व-कालीन, निरन्तर वास्तविकता है। यह जानो और अपने को स्वाधीन करो। यह जानो और सब रंज दूर फेको। इस सम्पूर्ण विकृति और कुरूपता का वास्तविक अनन्तता और देवत्व से, जो इन समस्त विभिन्न शीशों तथा दर्पणों में अपने को प्रकट और आविर्भूत करता है, कोई सम्बन्ध नहीं है। भेद तुम्हारे शरीरों में हैं। शरीर, मन, विभिन्न शीशों के समान हैं। एक शरीर गरारीदार शीशे के तुल्य है, दूसरा पहलदार है। कोई सफेद, कोई अनुकूल और कोई प्रतिकूल शीशे के समान है। शरीर विभिन्न हैं, किन्तु तुम केवल शरीर, प्रकट अवास्तविक आप नहीं हो। अज्ञानवश तुम अपने को शरीर कहते हो, शरीर तुम हो नहीं। तुम अनन्त शक्ति, परमात्मा, निरन्तर, निर्विकार, निर्विकल्प एक हो, तुम ऐसे हो यह जानते ही तुम अपने को समस्त संसार, अखिल ब्रह्माण्ड में बसते पाते हो।

हमारे भारत में शीशमहल हैं। शीशमहलों की सब दिवालें और छतें तरह २ के शीशों और दर्पणों से जड़ी होती हैं। मालिक मकान ऐसे कमरे में आता है और अपने को सब ओर पाता है।

एक बार ऐसे एक दर्पण घर में एक कुत्ता आगया। कुत्ते ने अपनी दाहिनी ओर से कुत्तों के झुण्ड के झुण्ड अपनी

ओर आते देखे। आप जानते हैं कुत्ते बड़े द्वेषी होते हैं। कुत्ता अपने सिवाय दूसरे कुत्ते को नहीं देख सकता। वे बड़े द्वेषी होते हैं। जब इस कुत्ते ने दाहिनी ओर से हजारों कुत्तों को अपनी ओर आते देखा, वह बांई तरफ मुड़ा। इधर की दिवाल पर भी हजारों शीशे लगे हुए थे। इधर से भी कुत्तों की एक सेना उसे खा लेने, टुकड़े २ कर डालने के लिये अपनी ओर आती दिखाई दी। वह तीसरी दिवाल की ओर घूमा। फिर भी उसे उसी तरह के कुत्ते दिखाई पड़े। चौथी दिवाल की ओर वह फिरा। अब भी वही गति। उसने छत की ओर मूड़ उठाया। वहां से भी हजारों कुत्ते खालेने और चीथ डालने के लिये उसे अपनी ओर उतरते दिखाई पड़े। वह डर गया। वह कूदा तो सब ओर के सब कुत्ते कूदे। जब वह भूँकने लगा तो उसने सब कुत्तों को भूँकते और अपनी तरफ मुँह पसारते देखा। चारों दिवालों से उसकी ध्वनि की प्रतिध्वनि उठने लगी। वह सहमा। वह इधर उधर कूदने और दौड़ने लगा। इस तरह बेचारा कुत्ता थक कर ठौरही ढेर होगया।

वेदान्त तुम्हें बताता है, यह संसार ठीक ऐसे ही शीशाघर के समान है, ये सब शरीर विभिन्न दर्पणों के तुल्य हैं, और तुम्हारी सच्ची आत्मा या वास्तविक आपका सब ओर ठीक वैसे ही प्रतिबिम्ब पड़ता है जैसे कि कुत्ता अपना प्रतिबिम्ब चारों दिवालों में देख रहा था। इसी तरह एक अनन्त आत्मा, एक अनन्त ईश, अनन्त शक्ति विभिन्न दर्पणों में अपना प्रतिबिम्ब डालती है। एक अनन्त राम ही इन सब शरीरों द्वारा प्रतिबिम्बित हो रहा है। मूर्ख लोग कुत्तों की तरह इस संसार में आते और कहते हैं, "वह मनुष्य मुझे खालेगा, अमुक

आदमी मेरे टुकड़े २ कर डालेगा, मुझे मिटा देगा "। ओः ! इस संसार में ईर्ष्या और भय कितना अधिक है। इस ईर्ष्या और भय का क्या कारण है? कुत्ते की अज्ञानता, कुत्ते की सी अज्ञानता इस संसार के यावत द्वेष और भय का कारण है। कृपया पटरे उलट दीजिये। इस संसार में दर्पण और शीशा-घर के मालिक की तरह आइये। इस संसार में म—रा की तरह नहीं रा—म* होकर अथवा हरि (बन्दर) की तरह नहीं हरि (विष्णु) की तरह आइये, और आप शीशमहल के मालिक होंगे, आप सम्पूर्ण संसार के स्वामी होंगे। आप जब अपने प्रतिद्वंदियों, भाइयों और शत्रुओं को आगे बढ़ते देखेंगे, आप को हर्ष होगा। कहीं भी किसी प्रकार का गौरव देख कर आपको प्रसन्नता होगी। आप इस संसार को स्वर्ग बना देंगे।

अब हम मनुष्य पर आते हैं। सान्त बीज में आप अनन्त देख चुके। वह उद्भिज्ज वर्ग का उदाहरण था। परमाणु में भी आप को सान्त में अनन्त दिखाया जा चुका। यह प्राणि-वर्ग से उदाहरण था। आप शीशे के मामले में भी सान्त में अनन्त देख चुके। यह उदाहरण धातुवर्ग से लिया गया था। अब हम मनुष्य पर आते हैं।

जैसे कि मूल बीज ने मिट कर हजारों बीजों की उत्पत्ति की, किन्तु वास्तव में असली बीज न बढ़ा और न घटा था; और जिस प्रकार मूल परमाणु मर कर हजारों परमाणुओं को पैदा करता है, यद्यपि असली परमाणु ज्यों का त्यों बना

---

*मूल व्याख्यान में अंग्रेजी के 'डॉग' Dog और 'गॉड' God शब्दों का व्यवहार किया गया है। डी-ओ-जी=डॉग माने कुत्ता, और इसके उलटे जी-ओ-डी=गॉड के माने ईश्वर हैं।

रहता है; और जिस प्रकार शीशे टूट गये थे, दर्पण टूट जाता है, किन्तु वास्तविक बच्चा नहीं छिन्न हुआ था; ठीक उसी प्रकार जब मनुष्य मर जाता है, उसके पुत्र, दो या अधिक, कभी २ दर्जनों उसका स्थान ग्रहण करते हैं। कुछ अंग्रेजों, हिन्दुस्थान के आंग्ल-भारतियों के कोड़ियों बच्चे होते हैं। जन्मदाताओं की मृत्यु हो जाने पर दर्जनों और कोड़ियों उनके स्थान पर आ जाते हैं। फिर इनकी भी मरने की बारी आती है और ये चौगुनी सन्तति अपने पीछे छोड़ जाते हैं। वे भी मरते तथा और भी बड़ी संख्या अपने पीछे छोड़ जाते हैं। अब फिर वही बात है। जैसे कि मूल परमाणु नष्ट होकर अपने स्थान में दो छोड़ गया था, और इन दो से चार हो गये थे, और चार से आठ हो गये थे; मूल बीज मिट गया था और उससे यथा समय हजारों बीज हो गये थे; ठीक वैसे ही नर और नारी के भी एक जोड़े से कोड़ियों, नहीं हजारों, लाखों उसी प्रकार के जोड़े हो जाते हैं। जोड़े का गुणन होता ही जाता है। सविस्तर वर्णन के लिये समय नहीं है। एक व्याख्यान में ढांचा भर दिया जा सकता है।

वेदान्त आप को बताता है कि ठीक वही हाल आप का भी है, जो बीज, परमाणु, या शीशे का था। नर और नारी का प्रारम्भिक जोड़ा मर गया। उससे, इसाई बाइबिल के आदम और ईव से संसार के कोटियों वासियों का जन्म हो गया।

यहां पुनः वेदान्त आप से कहता है कि यह प्रकट गुणन, यह देखने की बाढ़, वास्तविक, असली मनुष्य में जो तुम हो, किसी प्रकार की वृद्धि की द्योतक नहीं है। वास्तविक मनुष्य (संख्या में) बढ़ता नहीं है। तुम्हारे अन्तर्गत वास्तविक

मनुष्य अनन्त सर्व है। आप कह सकते हैं, मनुष्य अनन्त व्यक्ति है। सब मनुष्यों को मर जाने दीजिये, कोई सी भी केवल एक जोड़ी बच रहे। इस एक जोड़े से हमें यथा समय कोड़ियों नर-नारी मिल सकते हैं। आरम्भिक दम्पती में जो अनन्त सामर्थ्य, अनन्त शक्ति, अनन्त योग्यता छिपी हुई या गुप्त थीं, आज भी हर जोड़े में बेघटी, अविकल पाई जाती है। तुम यह अनन्तता हो। यह अनन्त सामर्थ्य, अनन्त शक्ति आप हैं, और यह शक्ति सकल शरीरों में वही है। ये शरीर दर्पण की तरह भले ही बढ़ जाँय, परन्तु मनुष्य, वास्तविक अनन्तता एक है। तुम इन शरीरों को चाहे बहुत कुछ बताओ, तुम इन्हें समझो, किन्तु तुम ये (शरीर) नहीं हो। आप अनन्त शक्ति हैं, जो केवल एक अपरिछिन्न है। आप कलह जो कुछ थे, वही आज भी हैं और सदा रहेंगे। एक सामान्य उदाहरण से बात अधिक साफ हो जायगी।

महाशय, आप कौन हैं? मैं श्रीमान् अमुक हूँ। क्या आप मनुष्य नहीं हैं? हां, अवश्य मनुष्य हूँ। आप कौन हैं? मैं श्रीमती अमुकी हूँ। क्या आप नारी नहीं हैं? अवश्य नारी हूँ। किसी से भी पूछ देखिये, वह अपने को मनुष्य कहेगा। किन्तु किसी तत्त्वज्ञान हीन मनुष्य से प्रश्न कीजिये, वह आप से कदापि नहीं कहेगा कि, मैं मनुष्य हूँ। वह भी कहेगा कि, मैं अमुक महाशय हूँ, मैं अमुकी महाशया हूँ। किन्तु, मनुष्य तो आप भी हैं। तब वह शायद अपना मनुष्य होना मंजूर करेगा।

अब हमारा सवाल है, क्या आपने कभी कोई अदूषित (विशुद्ध), अविशिष्ट, अनिर्दिष्ट मनुष्य देखा है? देखा है कभी आपने ऐसा कोई? जहां कहीं हमें संयोग पड़ता है, श्रीमान्

अमुक या श्रीमती अमुकी प्रकट हो जाती है, कोई महाशय या कोई महाशया निकल आते हैं। किन्तु वास्तविक मनुष्य कोरा मनुष्य आप कहीं नहीं पा सकते। तथापि हम जानते हैं कि यह विशुद्ध मनुष्य सब वस्तुओं से बड़ा है। यह जाति, कोरा मनुष्य, अपने रामपन और मोहनपन से रहित, अथवा अपने महाशयपन या महाशयापन से बेमिला मनुष्य मिलना आपको दुर्घट है। इस प्रकार के नाम उपाधि आदि से रहित विशुद्ध मनुष्य हम कहीं नहीं पा सकते, यद्यपि यह मनुष्य इन सब शरीर में वर्तमान है। अमुक महाशय को अपने सामने लाइये। उसका मनुष्य अंश अलग कर लीजिये, मनुष्य, निर्गुण मनुष्य घटा दीजिये, फिर क्या बच रहेगा ? कुछ नहीं। सब गया, सब गायब। 'महाशय—' निकाल डालिये, सम्पूर्ण महाशयपन तथा दूसरी बातें निकाल डालिये, हमारे लिये कुछ नहीं रह जाता, किन्तु वास्तविक मनुष्य अब भी वहां है। राम वास्तविक मनुष्य से मूलभूत शक्ति का, आप के भीतर की अनन्तता का अर्थ लेता है। पैरिश तत्त्व विचारक बर्कले के शब्दों के जाल में न भूलिये। पूरी परीक्षा और विवेचना कीजिये। आप देखेंगे कि वास्तव में ऐसी कोई वस्तु है, अन्तर की अनन्तता, जो देखी, सुनी और चखी नहीं जा सकती। फिर भी जो कुछ आप देखते हैं, सब का मूल सोता यही है, यही अखिल दृष्टि का कारण है, यही उन सब चीजों का सारभूत है, जो आप चखते हैं। यह वास्तविकता है, ईशत्व है, जो कुछ आप जानते, देखते, सुनते या छूते हैं, सब में यही एक शक्ति है। इस प्रकार हमारी समझ में आता है कि सान्त के भीतर का अनन्त देखा, सुना, समझा, और विचारा जा सकता है। और फिर भी आप जो कुछ देखते हैं, इसी के द्वारा, जो कुछ सुनते हैं, इसी के द्वारा, जो कुछ सूँघते हैं, इसी के द्वारा। यह

अवर्णनीय होते हुए भी मूलभूत है, समस्त वर्णितों का सारांश है।

अन्त में राम आप से चाहता है कि, आप अपने ऊपर केवल एक कृपा करें। सब छोड़ कर मनुष्य बनिये। ये सब शरीर ओस के बूँदों के समान हैं, और असली मनुष्य सूर्य की किरण के समान है, जो ओस की गुरियों में होकर गुजरती और उन सब को डोरे में पुह देती है। ये सब शरीर माला की गुरियों के तुल्य हैं और असली मनुष्य उन सब में होकर निकलने वाले डोरे के समान है। एक क्षण के लिये यदि आप शान्त बैठ कर विचार करें कि, आप विश्व-मानव हैं, अनन्त शक्ति हैं, आप देखेंगे कि आप वास्तव में वही हैं। मनुष्य होकर भी मैं सब कुछ हूँ, वह अनिश्चित मनुष्य या मनुष्य वर्ग होकर भी मैं सब कुछ हूँ। तुम सब एक हो, तुरन्त तुम सब एक हो। इस श्रीमानपन, श्रीमतीपन से ऊपर उठिये। इससे ऊपर उठते ही आप की सम्पूर्ण से एकता हो जाती है। कैसी महान धारणा है! तुम सम्पूर्ण में मिल जाते हो। तब आप की अखिल विश्व से एकता हो जाती है। एक उपनिषद् के एक अंश का यह उल्था है, किन्तु कुछ रूपान्तर से है।

मैं ब्रह्म अगोचर निर्विकार;
सब सूक्ष्म तत्त्व का परम सार।

पावक में ज्वाला मम विकाश;
रवि शशि ग्रहगण में मम प्रकाश॥ १॥

मैं बहता हूँ नित पवन-संग;
लहराता हूँ सह जल-तरंग।

मैं नर हूँ, पुनि मैं सुभग नारि;
मैं बालक, हूँ मैं ही कुमारि॥ २॥

मैं ही हूँ पुनि नवजात बाल;
मरणोन्मुख बूढा अति बिहाल।

मैं श्याम मक्षिका, सिंह काल;
मैं हरित कीर दृग लाल लाल ॥ ३ ॥

मैं ही हूँ जल में जलज मीन;
मैं ही तृण, मैं ही तरु नवीन।

चंचल चपला घन-घटा बीच;
मेरी ही छवि कवि रहे खींच ॥ ४ ॥

मैं ही सब ऋतु, मैं ही समुद्र;
मुझ में ही है सब बृहत्, क्षुद्र।

मुझ में ये दृश्यादृश्यमान;
करते सु-आदिमध्यावसान ॥ ५ ॥

अनन्त तुम हो, वह अनन्तता तुम हो, और वह अनन्तता होने के कारण, इन काल्पनिक, मिथ्या मायामय शरीरों की सृष्टि की है। तुमने अपने लिये शीशा घर की भांति यह संसार बनाया है। एक अनन्त, विश्व ईश की चिन्ता करो और तुम वही हो। वह इस जग में रहता और व्याप्त है।

ॐ ! ॐ !! ॐ !!!

——o——

आत्मसूर्य और माया।

(ता० १२ जनवरी १९०३ को अमेरिका के सैन फ्रांसिस्को नगर में दिया हुआ व्याख्यान।)

——:*:——

महिलाओं और भद्रपुरुषों के रूप में अविकारी आत्मन्!

आज के व्याख्यान का विषय परिवर्त्तनशील में अपरिवर्तनीय है। प्रारम्भ करने के पूर्व कुछ शब्द उस प्रश्न के उत्तर में बोले जाँयगे, जो राम से बारबार किया गया है। "जिस रंग के कपड़े आप पहनते हैं उसकी विशेषता क्या है? बौद्ध पीले, और वेदान्ती साधु, स्वामी गेरुए रंग के कपड़े क्यों पहनते हैं?"

आप जानते हैं, हरेक धर्म के तीन अंग होते हैं। प्रत्येक धर्म का अपना २ तत्त्वशास्त्र, पुराणशास्त्र, और कर्मकाण्ड है। दर्शनशास्त्र के बिना कोई धर्म टिक नहीं सकता। विद्वानों, बुद्धिमानों और युक्तिशील श्रेणी के लोगों पर प्रभाव डालने के लिये दर्शन शास्त्र की; भाव प्रधान चितवृत्तियों अथवा लहरी स्वभाव के लोगों का मन मोहने के लिये पुराण की; और जन साधारण को अपनी ओर खींचने के लिये कर्मकाण्ड की उसे आवश्यकता पड़ती है।

वस्त्रों के रंग का सम्बन्ध वेदान्त धर्म के कर्मकाण्ड विभाग से है। इसाई 'क्रॉस' (सूली=इसाई धर्म का एक चिह्न) का

व्यवहार क्यों करते हैं ? यह आचार है। इसाई अपने गिर्जा-घरों की चोटियों पर 'क्रॉस' क्यों लगाते हैं ? यह आचार है। रोमन कैथोलिक (एक सम्प्रदाय) इसाइयों में कर्मकाण्ड की अधिकता है। प्रॉटेस्टैंटों (दूसरी इसाई सम्प्रदाय) में कर्मकाण्ड की बहुत कमी है, किन्तु कुछ न कुछ है अवश्य। इसके बिना उनका भी काम नहीं चलता। इस प्रकार ये रंग भी वेदान्त धर्म की विधि हैं। हिन्दू की दृष्टि में लाल और गेरुए रंगों का वही अर्थ है जो इसाई के लिये 'क्रॉस' का है। सूली (क्रॉस) क्या सूचित करती है ? वह ईसा की मृत्यु की, ईसा के प्रेम की यादगार है। ईसा ने जनता के लिये अपने शरीर को सूली पर चढ़ने दिया। इसाइयों के सूली के व्यवहार का यह अर्थ है। यदि आप किसी हिन्दू से सूली का अर्थ पूछें तो वह कुछ और ही बतावेगा। वह कहेगा, ईसा का उपदेश है सूली लो, अपनी सूली उठाओ और मेरा अनुसरण करो। 'मेरी सूली लो' वह नहीं कहता। बाइबिल में (बाइबिल के) नये संस्करण में सेंट पाल या ईसा आप से ईसा की सूली उठाने को नहीं कहते, किन्तु वे कहते हैं अपनी सूली लो। ठीक यही शब्द वहां हैं, अपनी सूली लो। इनका अर्थ है, अपने शरीर को सूली पर चढ़ाओ, अपनी सांसारिकता को सूली पर चढ़ाओ, अपने क्षुद्र स्वयं को सूली पर चढ़ाओ, अपने अहं-भाव को सूली पर चढ़ाओ। यह उसका अर्थ है। अतएव सूली अपने स्वार्थों को, अपने तुच्छ अहं, अपने तुच्छ अहंभाव-पूर्ण, स्वार्थमय अहं को सूली देने का चिन्ह होना चाहिये। सूली का, सूली व्यवहार करने का यह अर्थ है। इस अर्थ में अथवा किसी दूसरे अर्थ में ग्रहण करना आपकी इच्छा पर निर्भर है। किन्तु वेदान्त सदा आप से सूली को इसी अर्थ में लेने की सिफारिश करता है। और इसी अर्थ में एक बौद्ध

पीत वस्त्र पहनता है।

पीला कम से कम भारत में मुर्दे का रंग है। मुर्दे का पीला रंग होता है। पीले वस्त्रों या पीली पोशाक से सूचित होता है कि, उनको धारण करने वाला मनुष्य अपने शरीर को सूली पर चढ़ा चुका है, अपने रक्तमांस के शरीर को निरानिर तुच्छ समझ चुका है, सांसारिकता से ऊपर उठ चुका है, सब स्वार्थमय अभिप्रायों से परे है, ठीक वैसे ही जैसे कि रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय के इसाई जब किसी को साधु बनाते हैं तब उसे टिकटी या रथी में रखते हैं और उसके सिरहाने खड़े होकर 'जाब'* वाला अध्याय पढ़ते हैं। उन गीतों, भजनों और उपदेशों को वे उसके निकट पढ़ते हैं, जो साधारणतः मुर्दे के पास पढ़े जाते हैं। और रथी में रक्खे हुए मनुष्य को विश्वास और अनुभव कराया जाता है कि वह मुर्दा है, समस्त प्रलोभनों, आवेगों, और सांसारिक इच्छाओं के लिये मुर्दा है। बौद्धों को पीले कपड़े पहनने पड़ते हैं, जिसका अर्थ है कि उस मनुष्य को सांसारिक आकांक्षाओं से, स्वार्थपूर्ण उद्देश्यों और अभिप्रायों से अब कोई मतलब नहीं रह गया, मानों संसार के लिये वह मुर्दा है। वेदान्तियों के गेरुए रंग का अर्थ है, अग्नि का रंग। यह रंग [वक्ता के कपड़ों के रंग से अभिप्राय है] ठीक २ आग के रंग का सा रंग नहीं है। किन्तु आग से इसकी अपेक्षा अधिक मिलता हुआ दूसरा रंग अमेरिका में नहीं मिल सका। हमारे भारत में एक रंग है जो ठीक अग्नि के रंग का है। एक भारतीय साधु कहीं पर बैठा हो तो दूर से देख कर आप नहीं जान सकते कि मनुष्य है या अंगारों का ढेर। यह रंग अग्नि के लिये है इसका अर्थ यह है

---

*बाइबिल का एक भाग।

कि मनुष्य ने अपने शरीर का दाह कर दिया है। आप जानते हैं कि, हमारे भारत में मृतक शरीर गाड़ा नहीं जाता, हम उसे भस्मीभूत करते हैं, जलाते हैं। इस प्रकार यह लाल रंग सूचित करता है कि इन कपड़ों को पहननेवाले मनुष्य ने अपने शरीर का हवन कर दिया है. अपने शरीर को सत्य की वेदी पर चढ़ा दिया है, सब सांसारिक इच्छायें जला दीं, जला दीं, जला दीं। सब सांसारिक इच्छायें, सब सांसारिक आकांक्षायें, सब सांसारिक कामनायें और लालसायें अग्नि देव के हवाले कर दी गईं।

सूली का भी रंग लाल है। ईसा का रक्त भी लाल है। इसाइयों को भी किसी लाल चीज की आवश्यकता पड़ती है। यह भी लाल है. और रक्त तथा अग्नि होने के दोहरे अर्थ रखता है। किन्तु यह एक और अभिप्राय का भी सूचक है। पीले रंग से भी शरीर की मृत्यु, सांसारिकता की मृत्यु प्रकट हो सकती थी। किन्तु वे (हिन्दू साधु) पीले वस्त्र नहीं पहनते, वे अग्नि के रंग के लाल कपड़े पहनते हैं। इसका भाव यह है कि, एक दृष्टि से तो यह मरण है और दूसरी दृष्टि से जीवन। आप जानते हैं, अग्नि में जीवन होता है, अग्नि जीवन का पालन करती है, अग्नि में तेज होता है, शक्ति होती है। लाल पोशाक दो अर्थ रखती है। वह सांसारिकता की मृत्यु और आत्मा के जीवन के अर्थ रखती है। भयभीत न हो, भयभीत न हो। वेदान्त जल संस्कार [बैपटिज़्म–इसाई धर्म का एक संस्कार] के बदले अग्नि संस्कार की शिक्षा देता है। वह अग्नि के, लौ के संस्कार का, शक्ति के, तेज के संस्कार का उपदेश देता है। ओः! भय न करो कि यह अग्नि है और हमें भस्म कर देगी! तुम भी बाइबिल

में पढ़ते हो, "जो अपना जीवन बचाना चाहे वह जीवन खोवे"। इस तुच्छ जीवन को खो कर तुम असली जीवन की रक्षा कर सकते हो, वही सिद्धान्त है । अरे! इस संसार के लोग अपने जीवन का कैसा सर्वनाश करते हैं। वे अपने सांसारिक जीवन को कैद की जिन्दगी, मृत्यु की जिन्दगी, नरक की जिन्दगी बना लेते हैं। राम को आप क्षमा करें, यह सत्य है.। उनके हृदयों पर, उन की छातियों पर चिन्ता और शोक का विराट हिमालय, चिन्ता और शोक का विराट पहाड़ रक्खा हुआ है । हिमालय हमें न कहना चाहिये, हिमालय तो साक्षात् शक्ति और विभूति है। हम शोक और चिन्ता का महाशक्तिशाली पहाड़ कहेंगे । वे अश्रु और हास्य के बीच में लटकन की तरह सदा झूला करते हैं, कभी किसी की टेढ़ी नज़र और धमकी से हताश होते हैं, कभी किसी की कृपा और आशाजनक वचनों से प्रसन्न। अपनी कल्पना से वे सदा अपने इर्दगिर्द कारागार, अंधकूप और नरक की सृष्टि उत्पन्न किया करते हैं।

वेदांत चाहता है कि आप इस तुच्छ प्रकृति, इस अज्ञानता से पीछा छुडा लें। इस अज्ञानता को, इस नीचे अहंभाव को,इस तुच्छ स्वार्थभाव को जो आप के शरीर को नरक बनाता है, जला दो और ज्ञान की अग्नि को भीतर आने दो । हिन्दू अग्नि को सदा ज्ञान का स्थानापन्न बनाते हैं । ज्ञान की अग्नि भीतर आने दो,और यह सब भूसी तथा कूड़ा करकट जल जाने दो। तुम सिर से पैर तक आग,स्वर्गीय अग्नि,नख-शिख दहकते हुए निकल आओ, यही इस रंग का अर्थ है।

किसी ने राम से पूछा था, "तुम ध्यान क्यों खींचते हो?" राम ने उससे कहा था," भाइ, भाई, तुम्हीं समझ कर बताओ

यदि इन कपड़ों में कोई दोष हो"। उसने कहा, "मैं तो कोई हानि नहीं बता सकता किन्तु दूसरे लोग दोष निकालते हैं"। किन्तु दूसरों की अज्ञानता के तुम ज़िम्मेदार नहीं हो। अपनी बुद्धि और दिमाग की चौकसी रक्खो। यदि आप कोई दोष निकाल सकते हैं तो इन कपड़ों में निकालिये। यदि दूसरे दोष निकालते हैं तो आप उसके जिम्मेदार नहीं है।

सब से श्रेष्ठ साधु, श्रेष्ठतम भारतीय साधु, इस संसार में सबसे बड़ा स्वामी, सूर्य उदय होता हुआ सूर्य है। निकलता हुआ सूर्य नित्य आप को लाल पोशाक में, वेदांती साधु की पोशाक में दर्शन देता है। आज के व्याख्यान में, यह सूर्य आप के सामने परिवर्तनशील शरीरों के सम्बन्ध में निर्विकार का अर्थसूचन करेगा। सूर्य, स्वामी, साधु, लाल वस्त्रधारी सूर्य को हम सच्ची आत्मा, वास्तविक स्वयं, जो बेबदल है, जो निर्विकार है, जो आज, कल्ह और हमेशा एकरस है, मान लेते हैं। हम अब परिवर्तनशील, बदलने वाली वस्तुयें बतावेंगे, जो मनुष्य में परिवर्तनशील शरीरों का काम देती हैं। मनुष्य में बदलने वाले पदार्थ हैं, और मनुष्य में निर्विकार, निर्विकल्प, नित्य, वास्तविक आत्मा है। वास्तविक आत्मा सूर्य के समान है। और परिवर्तनशील तत्त्व तीन शरीर हैं; स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर, और कारण शरीर। राम इन शरीरों को ये नाम देता है। संस्कृत में इन्हें स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीर कहते हैं। और राम उनका उल्था स्थूल (Gross) शरीर, सूक्ष्म (Subtle) शरीर, बीज (Seed) शरीर करता है। ये तीनों शरीर, कारण, सूक्ष्म और स्थूल शरीर परिवर्तनशील पदार्थ हैं। ये आतमा नहीं, किन्तु अनात्म हैं। ये परिवर्तनशील और अस्थिर हैं। ये तुम-आप

नहीं हैं । तुम-आप निर्विकार हो, निर्विकल्प हो, यही दिखाना है ।

तीनों शरीरों और सच्ची आत्मा की आप को स्वष्ट धारणा कराने के लिये हम एक उदाहरण का सहारा लेते हैं । कृपा पूर्वक खूब ध्यान दीजियेगा । आज के व्याख्यान में न्याय की बातें न बघारी जाँयगी, बहुत तर्क-वितर्क न होगा । आज मनुष्य का मसला, जैसा कि हिन्दुओं ने सिद्ध किया है, आप को साफ करके बताया जायगा । उसकी स्पष्ट व्याख्या की जायगी ताकि आप तुरन्त समझ सकें । पीछे यदि समय मिलेगा तो हम तत्त्व ज्ञान (शास्त्र) में प्रवेश करेंगे और प्रश्न के प्रत्येक पहलू को दलीलों से सिद्ध करेंगे । आप जानते हैं कि किसी विषय पर न्याय शास्त्र का प्रयोग करने के पूर्व हमें पहले समझ लेना चाहिये कि सिद्धांत क्या है।इस लिये आज सिद्धांत का अभि-प्राय स्पष्ट किया जायगा । और आप देखेंगे कि यह व्याख्या ही,अथवा मेघों की यह सफाई और सिद्धांत समझना ही स्वयं प्रमाण हो जायगा । जैसा कि पोप (एक अंग्रेज कवि) ने लिखा है' "नेकी एक ऐसी रूपवती सुन्दरी है कि उसे प्यार करने के लिये केवल देख लेने भर भी आवश्यकता है" । इसी प्रकार सत्य में भी ऐसी भव्य सुन्दरता है कि आप के हृदयों में उसके पैठ जाने के लिये केवल उसे साफ साफ देख लेने की ज़रूरत है । सूर्य के अस्तित्त्व के लिये किसी दूसरे प्रमाण की आवश्यकता नहीं है । सूर्य को देखना ही सूर्य को प्रमाणित करना है । हरेक चीज़ किसी बाहरी प्रकाश में दिखाई देती है, किन्तु प्रकाश को किसी दूसरे प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती कि वह देखा जासके । इस लिये आज रात को बिना किसी युक्ति और प्रमाण के (मन्तव्य) सिद्धान्त

केवल आप के सामने रख दिया जायगा। अब हम उदाहरण पर आते हैं।

कृपया आप राम के साथ हिमालय की हिमशिलाओं को चलिये। कैसा जगमगा दृश्य हमें दिखाई पड़ता है। हीरे का सा पहाड़, सब सफेद, अद्भुत झलझलाता हुआ, श्वेत हिमशिलाओं का समुद्र, अति चमकदार, अति सुन्दर, प्रभाशाली जान फूँकनेवाला। वहां न कोई वनस्पति है, न पशु है, न नर या नारी। इन बर्फीली चट्टानों पर जीवन का केवल एक स्रोत सूर्य, इन मनोहर दृश्यों पर चमकने वाला प्रभामण्डल, दिखाई देता है। अहा, कैसा सुहावना दृश्य है! कभी २ सूर्य का प्रकाश बादलों से छनकर भूमि पर पड़ता है, और सारी दृष्टिगत भूमि को अग्निवर्ण से दीप्त कर देता है, सम्पूर्ण दृश्य को स्वामी की पोशाक पहना देता है, सारी रंगभूमि को साधु, भारतीय साधु, बना देता है। कुछ ही देर बाद सब दृश्य पीला इत्यादि होजाता है। किन्तु है इस रंगशाला में केवल एक वस्तु, दूसरी कोई वस्तु नहीं। यह एक वस्तु है सूर्य।

आप समझते हैं कि इन हिमशिलाओं में हिन्दुस्थान की बड़ी २ नदियां छिपी हुई, लुकी हुई हैं। भारत की सब बड़ी बड़ी नदियां इन्हीं हिमशिलाओं से निकलती और बहती हैं। इन हिमशिलाओं में नदी का मूल स्थान या कारण शरीर है। अब आप कृपापूर्वक राम के साथ उतर कर नदी-जीवन के दूसरे टिकान पर चले चलिये।

यहां हम दूसरा ही रूप देखते हैं, दूसरे ही प्रकार के दृश्यों और भूभागों पर आते हैं। अब भी हम पहाड़ में ही हैं, किन्तु बरफ से ढकी हुई चोटियों पर नहीं, कुछ नीचे पर हैं। यहां मीलों तक, दर्जनों और कोड़ियों मीलों तक सब कहीं सुन्दर

गुलाब लगे हुए हैं और पवन मीठी सुगन्ध से पूरित है। यहां सुंदर बुलबुलें और दूसरी चिड़ियां गा रही हैं, वर्ष भर नित्य प्रेम-पत्र लिखा करती हैं। यहां मनोहर गायकपक्षी [पक्षी विशेष] अपनी मीठी तानों से पवन को परिपूर्ण करते हैं, और यहां हम शानदार, सुन्दर, मनोहर वृक्षों के बीच में अत्यन्त चित्ताकर्षक गंगा या किसी दूसरी नदी को अपने घूमते फिरते, टेढ़े मेढ़े मार्ग से जाते, खेलते, पहाड़ों में किलोल करते हुए देखते हैं। सुन्दर नाले और छोटी २ नदियां यहां हमें मिलती हैं। इन सुन्दर नालों में तट पर लगे हुए वृक्षों की परछांहीं पड़ती हैं, और ये छोटी नदियां या नाले बड़े सुहावने ढंग से खूब मौज से खेलते हुए, कभी इधर झुकते और कभी उधर। बार २ चक्कर काटते, कभी इधर मुड़ते और कभी उधर, तथा बराबर गाते हुए, ये नदियां और नाले बह रहे हैं।

यह क्या है ? नदी-जीवन की यह दूसरी दशा है। यहां नदी अपने सूक्ष्म शरीर में है। यह नाले या क्षुद्र नदी का रूप नदी का सूक्ष्म शरीर है। यह सूक्ष्म शरीर नदी के कारण शरीर से निकला है। यह नदी के कारण शरीर से आया है। आप जानते हैं नदी के कारण शरीर पर सूर्य चमक रहा था, और नदी के कारण शरीर पर सूर्य के ताप और प्रकाश की क्रिया से नदी का सूक्ष्म शरीर निकला। यह सूक्ष्म शरीर है। कहीं पर यह अति चञ्चल, डांवाडोल, घुमावदार, बांका-तिरछा है। यहां यह नीचे फांदता और जोश तथा जल्दी में छलांगे भर रहा है और वहां वह शान्त भाव से झील बनकर स्थिरता धारण करता है। यह बहुत ही डांवाडोल, चञ्चल और परिवर्त्तनशील है।

आओ, थोड़ा उतर कर समभूमि में पहुँचें। यहां मैदान

में दूसरे ही दृश्यों से हमारा सामना है। वही जल, वही नदी हमने बर्फ की टोपी पहने हिमशिलाओं में कारण रूप में वर्तमान देखी थी और नीचे पहाड़ों पर अपने सूक्ष्म आकार में उसने अत्यन्त चञ्चल और कवित्वमय रूप धारण किया। वही जल, वही नदी, अब मैदान में मटियारी नदी हो जाती है। मैदान में वही नदी, वही गंगा बड़ी शक्तिशालिनी सरिता हो जाती है। यह बहुत बदल गई। इसने नये वस्त्र, नया रंग धारण किया है। उसकी असली स्वच्छता और निर्मलता नहीं रह गई। वह मैली और गंदली हो गई तथा अपना रंग भी बदल दिया। मटियारी वह हो गई और साथ ही साथ उसकी गति भी बदल गई। अब यह मन्द अति मन्द होगई। दूसरी ओर अब वह अधिक उपयोगी हो गई है। इस विराट नदी के जलतल पर अब नावें और जहाज चल रहे हैं, व्यापार हो रहा है। लोग आकर नहाते हैं, और महान् नदी का जल अब नहरों और बम्बों तथा खेत सींचने और आस पास का प्रान्त उपजाऊ बनाने के काम में लाया जा रहा है।

नदी-जीवन की तीसरी दशा नदी का स्थूल शरीर है। और नदी के जीवन का हाल? नदी की असल प्रेरक शक्ति का क्या हाल है? नदी की असली प्रेरक शक्ति सूर्य, ज्वाज्वल्यमान ज्योति मण्डल है। अब इस उदाहरण को मनुष्य पर घटाओ।

तुम्हारे तीन शरीर कहां हैं, और उनका एक दूसरे से तथा वास्तविक स्वयं, तुम्हारे सच्चे आप या आत्मा से कैसा सम्बन्ध है?

अपनी गहरी नींद (सुषुप्ति) की अवस्था में जहां हरेक दूसरी वस्तु से तुम बेखबर रहते हो, जहां तुम संसार के विषय में कुछ

नहीं जानते, जहां पिता पिता नहीं है, माता माता नहीं हैं, घर घर नहीं है और संसार संसार नहीं है, जहां अज्ञानता है, जहां अज्ञानता के सिवाय और कुछ नहीं है, जहां अव्यवस्था की हालत है, मृत्यु की हालत है, प्रलय की हालत है, जहां यों कह लीजिये, पूरी शून्यता की दशा है, ऐसी गाढ़ निद्रा की अवस्था में वास्तव में आप क्या हैं ?

वेदान्त कहता है, वहां उस दशा में, जिसकी जांच आप में से अधिकांश ने कभी नहीं की है, मनुष्य का कारण शरीर है, मनुष्य के वास्तविक स्वयं या आत्मा के नीचे मनुष्य का कारण शरीर लम्बा २ लेटा हुआ है। मनुष्य-जीवन की नदी के जीवन से तुलना होने पर, हिमशिलाओं पर चमकते हुए सूर्य की भांति वहां हम सच्चा आत्मा पाते हैं।

कृपया खूब ध्यान से सुनिये। अब एक अत्यन्त सूक्ष्म बात का वर्णन किया जायगा। उस दिन यह बात कही जा चुकी है परन्तु अवसर चाहता है कि वह फिर दोहराई जाय।

तुम्हारी गहरी नींद की अवस्था में यह संसार नहीं मौजूद है, केवल स्वप्न-भूमि है। जागने पर तुम कहते हो कि, गहरी नींद की दशा में कुछ नहीं वर्तमान है, कुछ नहीं, कुछ नहीं। वेदान्त कहता है, सचमुच उस गहरी नींद की दशा में कुछ नहीं वर्तमान है। किन्तु आप जानते हैं, जैसा कि हेगेल ने साफ २ दिखाया है (जर्मन दार्शनिक हेगेल से पहले ही हिन्दु ऋषिगण विचार कर सिद्ध कर गये हैं कि यह 'कुछ नहीं' भी कुछ है।), यह 'कुछ नहीं' भी कारण शरीर है। यह वस्तु-अभाव, जिसे आप अपनी जागृत दशा में 'कुछ नहीं' बताते हैं, कारण शरीर है, यह आपके जीवन की हिमशिला है। जैसा कि बाइबिल में कहा गया है कि, 'कुछ नहीं' से ईश्वर ने कुछ की

सृष्टि की, उसी प्रकार हिन्दुओं ने दिखलाया है कि इस कारण शरीर से, जिसे जागने के बाद आप 'कुछ नहीं' वर्णन करते हैं, इस कारण शरीर से, जिसे आप 'कुछ नहीं' कहते हैं, इस कारण शरीर या 'कुछ नहीं' से समस्त संसार निकलता या पैदा होता है। यदि तत्त्वज्ञानी लोग आकर कहें कि 'कुछ नहीं' से 'कुछ' कदापि नहीं निकल सकता तो वेदान्त कहता है, जिसे हमने 'कुछ नहीं' कहा है वह वास्तव में 'कुछ नहीं' नहीं है, आप उसे केवल जागने पर 'कुछ नहीं' कहते हैं। आप जानते हैं कि एक ही शब्द की हम जिस तरह चाहें व्याख्या कर सकते हैं। यह वास्तव में 'कुछ नहीं' नहीं है। यह कारण शरीर है। यह हिम-शिलाओं के समान है। हां, अब आप कहेंगे, हम समझ गये कि उस सुषुप्ति से, जिसे हम 'कुछ नहीं' कहते हैं, कुछ का जन्म होता है और वह प्रकट 'कुछ नहीं' कारण-शरीर है। किन्तु भीतरी सूर्य का अनुभव कीजिये, भीतरी ईश्वर का अनुभव कीजिये, आत्मा का अनुभव कीजिये, जो कारण शरीर की इस हिमशिला से इस समस्त सृष्टि की उत्पत्ति करता है। सूर्य या ईश्वर या आत्मा का अनुभव कीजिये। आप पूछेंगे कि इसका क्या अर्थ है? कृपा करके सुनिये।

उठने पर आप कहते हैं, "ऐसी गहरी नींद सोया कि स्वप्न में भी कुछ नहीं देखा"। उस पर हम कहते हैं कृपा-पूर्वक इस कथन को कागज पर लिख लीजिये। तब वेदान्त आकर कहता है कि, यह कथन ठीक उसी मनुष्य का सा कथन है, जिसने कहा था कि घोर रात्रि में अमुक २ स्थान पर एक भी प्राणी मौजूद नहीं था। न्यायकर्त्ता ने उससे यह कथन कागज पर लिख लेने को कहा और उसने यही किया। विचा-

एक ने उससे प्रश्न किया, क्या यह कथन सच है ? उसने कहा, हां किम्वदन्ती के आधार पर यह बात कह रहे हो अथवा अपनी निजी जानकारी के आधार पर ? तुमने स्वयं देखा है ? उसने कहा, हां, मैंने स्वयं देखा है। बहुत ठीक। यदि तुमने अपनी आंखों से देखा है और यदि तुम चाहते हो कि हम तुम्हारी बात को सत्य समझें कि वहां कोई मौजूद नहीं था, तो अन्ततः तुम मौके पर अवश्य उपस्थित रहे होंगे, तभी तुम्हारा बयान सही हो सकता है। किन्तु यदि तुम स्थल पर उपस्थित थे तो यह बयान अक्षरशः सत्य नहीं है। कथन सर्वथा ठीक नहीं है, क्योंकि मनुष्य होते हुए तुम मौजूद थे। कम से कम एक मनुष्य मौक़े पर मौजूद था। इस प्रकार यह, कि कोई मौजूद नहीं था, उस स्थल पर एक भी मनुष्य वर्तमान नहीं था, मिथ्या है, विरुद्ध बयान है। इसके सत्य होने के लिये, और तुम चाहते हो कि हम इसे सत्य समझें, इसका असत्य होना ज़रूरी है। इसका असत्य होना इस लिये ज़रूरी है कि कम से कम एक मनुष्य स्थल पर मौजूद होना चाहिये।

इसी प्रकार, जागने पर जब हम यह बयान करते हैं कि "अरे भाई, ऐसी गहरी नींद मैं ने ली कि स्थल पर कुछ भी मौजूद न था", मैं कहता हूँ, महाशय, आप मौजूद थे। यदि आप सोये होते, यदि आपका सच्चा स्वयं, वास्तविक आत्मा और वास्तविक सूर्य, वास्तविक ज्योति मंडल, वास्तविक ईश्वर सोया होता तो स्वप्न की अव्यवस्था और शून्यता की गवाही कौन देता ? जब आप स्वप्न की अव्यवस्था और शून्यता की गवाही दे रहे हैं तो आप वहां अवश्य उपस्थित होंगे। इस प्रकार आपकी गहरी निद्रा में, वेदान्त कहता है,

दो वस्तुयें अवश्य दिखाई देती हैं; शून्यता, जो हिमशिलाओं या कारण-शरीर के तुल्य है, और साक्षी ज्योति, सूर्य, प्रकाशमान आत्मा, प्रभापूर्ण स्वयं या ईश्वर, जो उस सब को देख रहा है और गहरी निद्रित अवस्था के उजाड़ खण्ड पर भी चमक रहा है। वहां पर सच्चा आप निर्विकार सूर्य है, और गहरी नींद की वह शून्यता कारण-शरीर है, जो परिवर्तनशील और चंचल है। यह परिवर्तनशील और चंचल क्यों है? क्योंकि जब आप स्वप्नभूमि में आते हैं, जब आप स्वप्नावस्था में पड़ जाते हैं, वह शून्यता जाती रहती है, वह शून्यता नहीं बाकी रहती। यदि गहरी नींद की वह अव्यवस्था या शून्यता आप की वास्तविक आप होती तो वह सदा ज्यों की त्यों रहती। किन्तु वह बदलती है। जब आप स्वप्नदेश में आते हैं, तब बदलने की सामर्थ्य ही से सूचित होता है कि वह असली नहीं है। सूक्ष्मशरीर वास्तविक नहीं है। आप को आश्चर्य होगा, आप कहेंगे कि हमारा यह अद्भुत संसार शून्य से कैसे निकल पड़ा। किंतु यही तथ्य है। यूरोप और अमेरिका में आप लोग दूसरे ही ढंग से इन मामलों पर विचार करते रहे हैं, आप उलटी पुलटी दशा में इन बातों को ग्रहण करते आये हैं। राम पर विश्वास कीजिये, यह वह सत्य है, जो प्रत्येक व्यक्ति में व्यापना चाहिये, जो इस सृष्टि के प्रत्येक और सब के हृदय में देर या सबेर प्रवेश करेगा।

यहां लोग पेंदी से चोटी पर चीज़ों को ले जाने के अभ्यासी हैं। वे चाहते हैं कि नदियां नीचे से ऊपर पहाड़ पर उलटी बह कर जांय, जो अस्वाभाविक है। और इस लिये राम के अभी के इस कथन पर, कि आप की गहरी नींद की हालत की उस शून्यता से आपके स्वप्न देश का अनुभव

आता है, आप को आश्चर्य होगा, आप चकित होंगे। किंतु ज़रा जांच कीजिये, बिचार कीजिये । क्या यह प्रकृति का क्रम नहीं है? आप की पृथ्वी कहां से आई ? आप की यह पृथ्वी कभी बादली दशा में या कोहरे की सी थी। यह सब पहले ऐसी दशा में थी, जिसका कोई आकार न था, जो दशा आप की गहरी नींद की दशा की सी थी। यह आकार-हीन दशा में थी, यह ऊटपटांग दशा में थी। उस ऊटपटांग दशा से धीरे २ आप उद्भिज्ज वर्ग की, पशु की, और मनुष्य की उत्पत्ति हुई । वेदान्त आप को बतलाता है कि, आप सम्पूर्ण प्रकृति में जो कुछ पाते हैं, जो कुछ भौतिक दृष्टि से आप सत्य पाते हैं, वही अध्यात्म दृष्टि से भी सत्य है। यदि, कहने में, यह समस्त संसार ऊटपटांग या शून्य से उपजता है, तो आप की स्वप्न और जागृत दशायें भी उसी गहरी नींद की दशा की ऊटपटांग दशा से, शून्यता की दशा से पैदा हुई । आप की जागृत और स्वप्न दशायें उससे उत्पन्न हुईं। ठीक यही बात प्रत्येक मनुष्य के जीवन में पाई जाती है। उसकी बचपन की दशा शून्यता की हालत से बहुत मिलती जुलती है, फिर उस अवस्था से धीरे २ वह दूसरी दशाओं में आता है, जिन्हें आप उच्चतर कहते हैं, यद्यपि उच्चतर और निम्नतर सापेक्ष शब्द हैं।

समस्त विश्व में जो नियम है वही नियम हरेक मनुष्य के साधारण जीवन का भी है । गाढ़ निद्रितावस्था से यह स्वप्नावस्था पैदा होती है । लोग स्वप्न की अवस्था की व्याख्या इस तरह पर करने की चेष्टा करते हैं, मानों वह जागृत अवस्था के सहारे हो। आप को यह देखकर आश्चर्य होगा कि वेदान्त बातों को उनके यथार्थ रूप में देखता है

और प्रकट करता है कि, सब यूरोपीय तत्वज्ञानी आप के सब हेगेल और केंट स्वप्नों के अद्भुत व्यापार को पूरी तरह नहीं समझ सकते, आज इस विषय पर कुछ कहने का समय नहीं है । यह विषय किसी अन्य व्याख्यान में या कोई पुस्तक द्वारा सिद्ध करके आप को दिखाया जायगा ।

अब हम स्वप्न अवस्था पर आते हैं। स्वप्न-भूमि में हम आते हैं, मानों हिमशिलाओं से निचले पहाड़ों पर । तुम अब भी पर्वतमाला पर सोये हुये हो। यहां सूक्ष्म शरीर, स्वप्नदर्शी आप (स्वयं) अपने को एक विचित्र भूमिखण्ड में, काव्यमय प्रदेश में पाता है। आप का स्वप्नदर्शी आत्मा अब एक चिड़िया है, तब एक बादशाह है। तुरन्त वह फकीर होजाता है। अब वह एक ऐसा मनुष्य है, जो हिमालय पहाड़ पर अपनी राह भूल गया है। कुछ देर बाद वह लंदन सरीखे बड़े नगर का निवासी बन जाता है । अब वह इस नगर में है और तब उस नगर में। कैसा परिवर्तनशील है ! जिस तरह नदियां पहाड़ पर परिवर्तनशील, घूमती और चंचल हैं, दम बदम इस ओर और उस ओर मुड़ती रहती हैं, वही दशा तुम्हारे स्वप्न देखने वाले आत्मा की है। अपनी स्वप्न-अवस्था में तुम सर्वत्र फुर्ती दिखाते हो, ठीक उसी तरह जैसे नदियां पहाड़ पर फुर्त होती है, नालियां और नाले बड़ी जल्दी और फुर्ती दिखाते हैं, बड़े खेलाड़ी और वेगवान होते हैं। इसी तरह तुम्हारा स्वप्नदर्शी आत्मा इतना खेलाड़ी और जल्दबाज़ है। तुम कल्पना के देश में रहते हो। वहां मुर्दे जी उठते हैं, और जिन्दा लोगों को तुम कभी २ मुर्दा पाते हो। अद्भुत देश है! विचित्रता और काव्य का देश है। क्या यह ठीक सूक्ष्म शरीर वाली पहाड़ पर की नदी के समान नहीं है, जहां वह

विचित्रता और काव्य के देश में होती है। स्वप्न के अनुभव के बाद, मानों पहाड़ से निकलते हुए तुम अपनी दूसरी दशा में आते हो, तुम मैदान में आते हो, तुम जाग पड़ते हो। अपनी जागती दशा में तुम स्थूल शरीर बनाते हो ठीक जैसे कि नदी को मैदान में उतरते समय स्थूल शरीर की ज़रूरत पड़ती है। आप देखते हैं कि, गहरी नींद की (सुषुप्ति) अवस्था कारण शरीर कहलाती है, और आप के स्वप्न देश का शरीर सूक्ष्म शरीर कहलाता है, तथा आप की जागृत अवस्था का शरीर स्थूल शरीर कहलाता है। आप जानते हैं कि जब नदियां पहाड़ों से उतर कर मैदान में पैर रखती हैं, उनका सूक्ष्म शरीर जैसा का तैसा बना रहता है, केवल वह एक लाल या मटियारा ओढ़ना ओढ़ लेता है। आप पहाड़ से आने वाले जल को भी जानते हैं। वह ताज़ा, स्वच्छ जल मट्टी, कीचड़ और मैदान की धूल में छिपा रहता है। नदी का सूक्ष्म शरीर जैसा कि वह पहाड़ में देखा गया था, वहां (मैदान में आकर) बदला नहीं। उसने केवल नये कपड़े धारण कर लिये हैं, नई पोशाक पहन ली है। इस तरह नदी जब मैदान में उतरती और नई मटियारी पोशाक पहनती है, हम कहते हैं कि, नदी अपने स्थूल शरीर में है। जब सूक्ष्म-शरीर कारण-शरीर से निकला था तब ऐसा नहीं था। तब कारण-शरीर को पिघल कर सूक्ष्म-शरीर पैदा करना पड़ा था। और अब जागृत दशा में सूक्ष्म शरीर को पिघलना या बदलना नहीं पड़ता, उसे केवल नये कपड़े, नई पोशाक पहनना पड़ती है। वास्तव में यह घटना होती है।

आप की जागती दशा में सूक्ष्म शरीर, अर्थात् मन, बुद्धि, जो स्वप्न-देश में काम कर रहा था, ग़ायब नहीं हो जाता,

वही बना रहता है। किन्तु ये भौतिक तत्त्व, भौतिक सिर तथा और सब भौतिक पदार्थ, उस पर मानों पोशाक की तरह पहना दिये जाते हैं। और जब आप को सोना होता है, यह भौतिक स्थूल शरीर केवल उतार लिया जाता है, मानों वह किसी डंडे पर टंगा हुआ था, और सूक्ष्म शरीर इससे रहित हो जाता है।

जिस तरह सोते समय लोग अपने कपड़े उतार डालते हैं, उसी तरह आप इसे (स्थूल शरीर को) उतार डालते हैं और आप के स्वप्नों में केवल सूक्ष्म शरीर काम करता है। अच्छा, तो सूक्ष्म शरीर क्या है? अब दिखाया जायगा कि सूक्ष्म शरीर भी भौतिक है। सूक्ष्म और स्थूल का एक दूसरे से सम्बन्ध बताया जायगा। आप जानते हैं कि जाड़े की ऋतु में (जाड़े की ऋतु रात के समान है) नदियां आम तौर से अपने स्थूल शरीर को हटा देती हैं, अपने को अपने स्थूल शरीर से रहित कर लेती हैं और केवल अपना सूक्ष्म शरीर अपने साथ रखती हैं, अर्थात् शीतकाल में नदियों का डील घट जाता है, वे अपना कीचड़, मट्टी और लाल मटियारा जामा त्याग देती हैं। वे मानों नींद लेती हैं। जिस तरह नदियां अपना स्थूल शरीर उतार डालती हैं ठीक उसी तरह प्रत्येक दिन जब आप सोने लगते हैं (आप की रात) आप स्थूल को उतार डालते और केवल सूक्ष्म शरीर रख लेते हैं।

किन्तु जो सूर्य कारण-शरीर पर चमक रहा था। वही सूर्य समान भाव से नदी के सूक्ष्म शरीर पर भी चमकता है, प्रत्येक मनुष्य के सूक्ष्म शरीर पर समान भाव से चमकता है, जब वह (मनुष्य) स्वप्न-प्रदेश में होता है। और नदी के कारण तथा सूक्ष्म शरीरों पर चमकने वाला सूर्य उसके स्थूल

शरीर पर भी उसी तरह चमकता है।

सच्ची आत्मा या वास्तविक स्वयं, जो गहरी नींद (सुषुप्ति) की दशा के शरीर पर चमकता देखा गया था, आप के स्वप्न-प्रदेश और आप की जागृत दशा तथा स्थूल शरीर पर भी चमकता है। किन्तु भेद क्या है? भेद है सूर्य के प्रतिबिम्ब में। जब सूर्य नदी के कारण-शरीर, हिमशिलाओं पर चमक रहा था, तब उनमें सूर्य की छाया-मूर्ति नहीं दिखाई देती थी। हिमशिलाओं पर बड़ी प्रखरता से सूर्य की क्रिया हो रही थी, किन्तु प्रतिबिम्ब या मूर्ति नहीं दिखाई देती थी। परन्तु नदी के सूक्ष्म शरीर पर चमकते ही उसका प्रतिबिम्ब पड़ने लगा।

जब सूर्य नदी के सूक्ष्म-शरीर पर चमक रहा था, सूर्य की छायामूर्ति दिखाई पड़ती थी। हिम-टोपधारी चोटियों या हिमशिलाओं पर सूर्य की छाया-मूर्ति नहीं दिखाई पड़ती थी, किन्तु नदी के सूक्ष्म-शरीर में, पहाड़ों में, नालों में सूर्य की छाया मूर्ति दिखाई देती है। यह छाया मूर्ति क्या सूचित करती है? यह छायामूर्ति आप में वास्तविक आप, सच्ची आत्मा, निर्विकार, निर्विकल्प, सच्चा ईशत्व, आत्मा या ईश्वर है वही ईश्वर आपकी गहरी नींद की दशा में भी आप में वर्तमान है, जो ईश्वर आप के कारण-शरीर पर चमकता है। किन्तु विचार कीजिये, गहरी नींद की दशा में किसी तरह का अहंभाव नहीं उपस्थित है, आप को कोई विचार नहीं होता कि, मैं सोया हूँ, मैं बढ़ता हूँ, मैं भोजन पचाता हूँ, मैं यह करता हूँ। अर्थात् वहां (गहरी नींद की दशा में) किसी प्रकार का अहंभाव नहीं है। वास्तविक आत्मा वहां है, किन्तु वहां किसी प्रकार का अहंकार नहीं है। यह झूठा, प्रकट अहंकार, जिसे लोग आत्मा समझते हैं, वहां नहीं है। स्वप्न

की दशा में यह प्रकट होता है। स्वप्न की अवस्था नदी की दूसरी अवस्था के नदी के सूक्ष्म शरीर के समान है। उस (स्वप्न की) अवस्था में यह प्रकट होता है, और जागती दशा में भी यह प्रकट होता है। आप जानते हैं कि आप की जागती दशा नदी की मैदानी दशा के, नदी के स्थूल शरीर के तुल्य है। वहां नदी में सूर्य सफाई से चमक रहा है, वह हिम-शिलाओं पर भी स्वच्छता से चमक रहा था। किन्तु नदी में उसकी छाया मूर्ति भी प्रतिबिम्बित होती है, गंदली नदी पर सूर्य की छाया मूर्ति दिखाई पड़ती है। इसी तरह आपकी जागृत अवस्था में भी सूर्य की छायामूर्ति दिखाई पड़ती है। यह अहंकार—मैं यह करता हूँ, मैं यह करता हूँ, मैं यह हूँ, मैं वह हूँ, यह सब अहंभाव—यह स्वार्थी प्रकट आत्मा जागृत दशा में भी अपने को प्रकट करता है। किन्तु आप देखते हैं कि आप के स्वप्न-प्रदेश के अहंकार और आपकी जागती दशा के अहंकार में अन्तर है। आप के स्वप्न-प्रदेश में अहं-भाव, जो आप के लिये सच्ची आत्मा या ईश्वर की छाया अथवा प्रतिबिम्ब है, ठीक उसी तरह चंचल, परिवर्त्तनशील, अस्थिर, डांवालोल, और धुंधला है जैसे नदी में, जब वह पहाड़ पर होती है, सूर्य का प्रतिबिम्ब अस्थिर, घूमता, परि-वर्त्तनशील है। और आप की जागती दशा में यह अहंभाव निश्चित और स्थायी है, जैसे मन्द धारा में, मन्द नदी में, जब वह मैदान में बह रही है।

यहां पर कुछ और कहना है। लोग पूछते हैं कि स्थूल शरीर को सूक्ष्म-शरीर का परिणाम या उत्तर प्रभाव (बाद का असर) कहने का आप को क्या हक है? लोग पूछते हैं, स्वप्न दशा को जागती दशा के ऊपर रखने का आपको क्या अधि-

कार है ? इस पर ध्यान दीजिये । जागती दशा का आपका अनुभव किन पदार्थों का बना हुआ है ? आपका जागृत अनुभव देश, काल और वस्तु पर टिका हुआ है । क्या आप किसी भी द्रव्य, इस संसार की किसी भी वस्तु का तथा देश, काल, वस्तु भाव की कल्पना, बिना मन में लाये विचार कर सकते हैं ? कदापि नहीं, कदापि नहीं । देश, काल और वस्तु के बिना आपको किसी भी चीज़ की धारणा नहीं हो सकती । इनके बिना किसी भी वस्तु की धारणा असम्भव है । देश, काल और वस्तु आपके संसार के ताने और बाने के समान हैं । उन पर ध्यान दीजिये, वे आपके स्वप्न-प्रदेश में हैं और जागृत अवस्था में भी हैं । आप जानते हैं, मैक्समूलर ने जर्मन तत्ववेत्ता कैंट के "क्रीटिक आफ प्यार रीज़न" नामक पुस्तक के अपने उल्थे की प्रस्तावना में कहा है कि कैंट भी उसी तत्त्वज्ञान की शिक्षा देता है जिसकी वेदान्त । वे कहते हैं कैंट ने साफ दिखला दिया है कि देश,काल और वस्तु पहले ही से हैं, और हिन्दुओं ने यह नहीं दिखाया है । राम तुमसे कहना चाहता है कि मैक्समूलर को हिन्दू धर्म-ग्रन्थों का काफ़ी ज्ञान नहीं था । राम तुम से कहना चाहता है कि, हिन्दुओं ने देश काल, और वस्तु को पहले से मौजूद और अन्तरङ्ग (या प्रधान, या प्रत्यगात्म) सिद्ध किया है । और उसी से दिखलाया गया है कि आपका जागृत अनुभव एक विचार से आपके स्वप्न-प्रदेश के अनुभव का उत्तर-प्रभाव है । धैर्य से सुनियेगा । आपकी गाढ़ निद्रा की अवस्था में आपको काल का कोई बोध नहीं रहता, देश का कोई बोध नहीं रहता, वस्तु (निमित्त) का कोई बोध नहीं रहता । आप स्वप्न-प्रदेश में उतरते हैं । वहां काल प्रकट होता है, देश की उत्पत्ति होती है, और वस्तु भी पैदा होती

है। हिन्दू आप से कहते हैं कि, आपके स्वप्न-प्रदेश के देश, काल और वस्तु उसी तरह आपकी गहरी नींद वाली दशा से निकले, जिस तरह बीज से नन्हा अंखुआ अपने दुर्बल और हीन रूप में निकलता है। और आपकी जागती दशा में देश, काल और वस्तु बढ़कर बड़े वृक्ष की दशा में आ जाते हैं। वे बली हो जाते और पक कर बड़ी ज़ोरदार नदी की दशा प्राप्त करते हैं, वे अपना स्थूल रूप धारण करते हैं। जिस तरह तुम उन्नति करते हो उसी तरह तुम्हारे साथ साथ देश, काल और वस्तु के संकल्प भी बढ़ते हैं। यह समझे रहना कि अहंभावी द्रष्टा (कर्त्ता) देश, काल और वस्तु के परिणाम के सिवाय और कुछ भी नहीं है। अपने स्वप्नों में भी आप काल रखते हैं, किन्तु अपने स्वप्नों के काल से अपनी जागती दशा के काल की तुलना कीजिये। स्वप्न का काल चंचल, बेबयान, धुंधला, अस्पष्ट, अस्थिर, अनिश्चित है। और जागती दशा का काल स्वभावतः प्रौढ़ (पका) रूप में है। मैं कहता हूँ, आपके स्वप्न-प्रदेश के काल का वह बलवान बढ़ा हुआ रूप है। आप जानते हैं, आपके स्वप्नों में कभी २ मरे जी उठते और जीते मर जाते हैं। आपकी जागती दशा में ऐसा नहीं होता। अब काल निश्चित है। आपके स्वप्न-प्रदेश में भूतकाल भविष्य हो जाता है और भविष्य हो जाता है भूत। आपने सुना होगा कि मोहम्मद को स्वप्न में आठवें स्वर्ग पर चढ़ने में बड़ा समय लगा था। किन्तु जब वह जागा तो उसे मालूम हुआ कि केवल दो पल बीते थे।

इसी तरह आपकी जागती दशा की चीजें आपके स्वप्न-देश की दशा की चीज़ों से केवल जाति ही में नहीं, उग्रता

और अंशों (स्थिति) में भी भिन्न हैं। आपकी स्वप्नावस्था में वस्तुयें सविकार, चंचल, अनिश्चित, अस्थिर हैं। वे बदली जा सकती हैं, जिस तरह छोटे पौधे की बाढ़ आप जिस तरफ चाहें फेर सकते हैं। किन्तु जब वह बड़ा भारी वृक्ष होजाता है, वह दूसरे रूप में ढाला, फेरा, या बदला नहीं जा सकता। अपने स्वप्न-प्रदेश में अभी आप एक नारी देखते हैं, क्षण भर में वह घोड़ी होजाती है। अभी आप अपने सामने एक जीता मनुष्य पाते हैं और बिना कुछ भी समय बीते वह मुर्दा होजाता है। अभी आप अपने सामने एक पहाड़ पाते हैं और बात की बात वह आग बन जाता है। जो चीज़ें आप अपनी स्वप्नावस्था में पाते हैं वे गहरी नींद की दशा में मौजूद नहीं थीं। गहरी नींद की दशा से वे निकल पड़ीं, जिस तरह हिमशिलाओं से छोटी नदियां, चंचल नाले निकल पड़ते हैं। और आपकी जागती दशा में काल और देश ये पहले से उपस्थित रूप में पक कर कठिन और दृढ़ रूप में आजाते हैं, निश्चित होजाते हैं और अपनी एक विशेष दृढ़ता पाते हैं।

आपके स्वप्नदेश की बुद्धिमानी, आपके स्वप्नदेश की बुद्धि जागती दशा से सम्बन्ध रखती है। राम निजी अनुभव से जानता है कि, जब वह विद्यार्थी था, प्रायः उसने स्वप्न में उन महाकठिन सवालों को लगा डाला जिन पर वह विचार करता रहा था। किन्तु जागने पर वह उन्हें न हल कर सका। अतः, तर्कवितर्क (सवाल लगाने की क्रिया) में भूल थी। आपके स्वप्न-प्रदेश के तर्क-वितर्क भी चंचल, सविकार, और जागती दशा से सम्बन्ध रखने वाले हैं, जिस तरह अधिक बढ़ा हुआ वृक्ष चंचल छोटे पौधे, परिवर्तनशील कली,

परिवर्तनशील छोटे वृक्ष के सम्बन्धी हैं।

प्रायः राम ने स्वप्न में कवितायें रचीं। किन्तु जागने पर जब उसने कविता पर दृष्टि डाली तो वह असम्बद्ध थीं और पंक्तियां पढ़ी न जा सकीं (मात्रायें ठीक न उतरीं)। उसमें शृंखला का, एकता का अभाव था। स्वप्नदेश की युक्तिमाला जागृत दशा की युक्तिमाला से सम्बन्ध रखती है, जिस तरह नदी का सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर का सम्बन्धी है। और आपके स्वप्न-प्रदेश का देश भी उसी तरह आपकी जागती दशा का देश से जुड़ा हुआ है। देश दृढ़, निरन्तर, बेबदल है। अब आप कहेंगे, नहीं, नहीं। यह क्या बात है कि, हम अपने स्वप्नों में उन्हीं वस्तुओं को देखते हैं जिनको हम अपनी जागती दशा में देखते हैं। हमारे स्वप्न हमारी जागती दशा की केवल यादें, केवल स्मृतियां हैं। राम कहता है, इससे क्या होता है? यही सही। बीज क्या है? बीज़ से सुन्दर छोटा पौधा निकलता है, वह परिवर्तनशील, लोचदार है। इस परिवर्तनशील, लोचदार छोटे पौधे से बड़ा भारी, बलवान कठोर वृक्ष उगता या बढ़ता है। बहुत ठीक। पुनः इस दृढ़ वृक्ष से कुछ और बीज प्राप्त होते हैं, वैसेही बीज जैसोंने इस वृक्ष को बढ़ाया था। अब ये बीज पूरे वृक्ष को अपने में धारण किये हुए हैं। वृक्ष ने अपना सब सारांश और सब शक्ति उलट कर फिर बीजों में रखदी। तो क्या हमें यह तर्क करना चाहिये कि वृक्ष बीज से नहीं निकला था? क्या यह तर्क करने का हमें अधिकार है कि वृक्ष बीज से नहीं निकला था? नहीं, नहीं, ऐसी बहस करने का हमें कोई अधिकार नहीं है।

इसी तरह पर वेदान्त कहता है कि सुषुप्ति, जिसे मैं

आपकी बीज-अवस्था कहता हूँ, गहरी नींद की दशा बीज के समान है। उसी से स्वप्न-देश आता है और उसीसे जागृत, स्थूल शरीर मानों बहता है, या उभरता है। और आप का जागृत अनुभव यदि फिर लौटाकर आप की नींद में जमाया (घनीभूत किया) जा सकता है, तो बिलकुल स्वाभाविक है। यदि आपका जागता अनुभव जमाया जा सकता है, या आप-के स्वप्नदेश में, आपके स्वप्न-दशा के अनुभव में लौटाया जा सकता है तो इससे राम के बयान का खण्डन नहीं होता। हो ऐसा। फिर भी उससे आप यह कहने के अधिकारी नहीं हो जाते कि आपकी जागती दशा आपके सूक्ष्म शरीर या स्वप्न-देश से नहीं विकसित हुई थी। आप ऐसा कहने के अधिकारी नहीं हैं, ठीक उसी तरह, जैसे कि सारा वृक्ष जमाकर बीज में रख दिया जाने से हम यह कहने के अधिकारी नहीं होजाते कि वृक्ष बीज से नहीं पैदा हुआ था। यदि आप-को अपने स्वप्नों में साधारणतया अपनी जागती दशा की यादें आती हैं, तो उससे राम के इस कथन को नकारने के अधिकारी आप नहीं होजाते कि, देश, काल, और वस्तु-भाव से ही, स्वप्नदेश के रूपान्तर या स्वप्नावस्था के अनुभव से ही जागती दशा का अनुभव विकसित होता है, या बढ़ता है।

वेदान्त दर्शन कहता है, स्वप्नदेश या जागृत अनुभव का जन्म आपकी गहरी नींद की अव्यवस्था अथवा अभाव (शून्यता) से हुआ था। संसार कुछ नहीं है या संसार अविद्या का नतीजा है, हिन्दुओं के इस कथन का मतलब यही है कि आपकी गहरी नींद की दशा का एक प्रकार का अभाव, अव्यवस्था अविद्या है, जमी हुई (घनीभूत) अविद्या है। यदि आप उसे खूब बढ़ी चढ़ी अविद्या कहना चाहते हैं तो गहरी नींद की

दशा अत्यन्त अविद्या है. और उसी अज्ञानता या अन्धकार से यह संसार आता है, यह भेद भाव और विकार आता है। और वह अविद्या परिवर्तनशील है। आप जानते हैं कि स्वप्नदेश में आप दो तरह की चीज़ पाते हैं, कर्त्ता और कर्म (Subject and object)। वेदान्त के अनुसार कर्त्ता और कर्म साथ २ आविर्भूत (पैदा) होते हैं। अपने स्वप्नों में आप एक ओर तो देखने वाले (द्रष्टा) होते हैं और दूसरी ओर देखी जाने वाली चीज़ (दृश्य) बनते हैं। यदि स्वप्न में आप एक घोड़ा और घोड़ेसवार देखते हैं, तो दोनों साथ ही दिखाई पड़ते हैं। यदि आप स्वप्न में पहाड़ देखते हैं, तो पहाड़ तो कर्म और आप द्रष्टा या देखने वाले अर्थात् कर्त्ता हैं। वहां कर्त्ता और कर्म साथ ही आजाते हैं। वहां स्वप्नदेश में एक प्रकार के समय के द्वारा स्वप्न का भूत और भविष्य भी अन्य पदार्थ का संगी हो जाता है। स्वप्न का भूत, वर्तमान और भविष्य, स्वप्न की अनन्तता, स्वप्न का वस्तु और स्वप्न के कर्त्ता तथा कर्म सब साथ ही आजाते हैं।

इसी तरह,वेदान्त कहता है,अपनी जागती दशा में भी आप देखी जाने वाली चीज़ वस्तु हैं और देखने वाले हैं। एक ओर तो आप मित्र और शत्रु हैं और दूसरी ओर देखने वाले हैं। एक ओर आप शत्रु हैं और दूसरी ओर आप मित्र हैं,आप सब कुछ हैं। किन्तु स्वप्न की ये सब अद्भुत घटनायें, नींद की अवस्था की आश्चर्य घटना, जागृत दशा का चमत्कार, ये सब व्यापार सविकार, अनित्य, चंचल, अस्थिर, अनिश्चित हैं। वास्तविक स्वयं, जिसकी सूर्य से तुलना की गई थी, असली आत्मा, तीनों शरीरों पर उसी तरह चमकता है, जिस तरह सूर्य नदी के तीनों शरीरों पर चमकता है। आत्मा निर्विकार है, निर्वि-

कल्प है। वह आत्मा या सूर्य आपकी गहरी नींद की दशा की हिमशिला पर चमकता है। आपकी आत्मा या सूर्य से आपका जागृत अनुभव प्रकाशित होता है। और आप यह भी देखते हैं कि, सूर्य नदी के केवल तीनों शरीरों पर ही नहीं चमकता है, किन्तु वही सूर्य ठीक उसी तरह संसार की सब नदियों के तीनों शरीरों पर प्रकाश डालता है। इसी तरह, इस नदी का शरीर यदि उस नदी के शरीर से भिन्न है तो क्या हुआ? यदि इस जीवन की नदी उस जीवन की नदी से दूसरी तरह पर बहती है तो क्या हुआ? किन्तु जीवन की इन सब नदियों पर, अस्तित्त्व की इन सब धाराओं पर वही नित्य, निर्विकार, निरन्तर आत्मा, या सूर्यों का सूर्य सब कालों में, सब अवस्थाओं में, निर्विकार, अपरिवर्तनीय चमक रहा है। वही तुम हो, वही तुम हो। वही वास्तविक आप (आत्मा) है। और आपका वास्तविक आत्मा आपके मित्र का वास्तविक आत्मा है, हरेक का और सब का वास्तविक आत्मा है। आपका वास्तविक आत्मा केवल जागती दशा में ही आपके साथ उपस्थित नहीं है, वह समान भाव से गहरी नींद की दशा में भी वर्तमान है, वह समान भाव से सब प्रकार की अवस्थाओं और विकारों में मौजूद है।

अनुभव करो कि वास्तविक आत्मा सब चिन्ता, सब भय से परे है, सब मुसीबतों और दुखों से दूर है। कोई आप को हानि नहीं पहुँचा सकता, कोई आप को चोट नहीं पहुँचा सकता।

टूट, टूट जा टूट, सिंधु! अपने कगार के चरणों पर,
टूट, टूट जा टूट, जगत! तू आकर मेरे चरणों पर।

ऐ सूर्यो ! ऐ प्रबल वात्य ! ऐ भूकंपो ! ऐ समर महान !
नमस्कार ! स्वागत ! मुझ पर अजमाओ अपनी शक्ति सु आन !

तू सुंदर पनडुब्बी नौका, अग्नि ! खेल की मेरी वस्तु,
दरको ! ऐ टूटते सितारो, मेरे बाणों, छूटो ! अस्तु !

तू प्रज्वलित अग्नि ! कर सकती है क्या मुझको भस्मीभूत ?
तू मुझसे, धमकानेवाली ! होती है प्रज्वलतीभूत !

तू लपकती कृपाण तथा तू गेंद जरासी अति सामान्य,
मेरी शक्ति हँकाती तुझको अधाधुंध कर तेरा मान्य।

छिन्न भिन्न यह देह पवन में फेक दिया जब जाता है,
अनंतता ही तब फिर मेरा मुख्यालय बन जाता है।

हैं सब कान, कान मेरे; सब नेत्र, नेत्र मेरे ही हैं;
हाथ सकल हैं कर मेरे; मन सारे, मन मेरे ही हैं।

निगल गया मैं मृत्यु, भेद भी गया पान कर मैं सारा;
कैसा मधुर सुपुष्ट सुभोजन पाता हूँ मैं बिन मारा !

भीति न कोई, शोक न कोई; नहीं लालसा की पीडा;
अखिल, अखिल आनंद, सूर्य या वृष्टि करें नितही क्रीडा।

ज्ञानशून्यता, अंधकार, हैं व्याकुल औ, अति हिले हुए,
काँपे, औ' थर्राए, गायब हुए, सदा के लिये मुए।

मेरी इस जगमगी ज्योति ने उसे झुलस औ' भून दिया,
अमिटानंद अहाहाहा ! मैं ! वाह ! वाह !! क्या खूब किया !!!

ईश्वर-भक्ति ।

न कभी थे बादा-परस्त हम, न हमें ये कैफे-शराब है,
लबे-यार चूमे थे ख्वाब में, वही जोशे-मस्तीए-ख्वाब है।

अर्थात् न हम कभी सुरा-प्रेमी थे और न हमें मदिरा का उन्माद ही है; (हमने तो) स्वप्न में (अपने) प्यारे के अधरों का चुंबन किया था, उसी स्वप्न की मस्ती की गर्मी है।

कहते हैं सूर्य तेरी छाया है, मनुष्य तेरे नमूने पर बनाया गया है, मनुष्य में तेरा श्वास फुँका हुआ है। तू फूलों में हँस रहा है, वर्षा में तार-तार आँसू बहाता है। हवा तेरी साँस है। रातों को मानो तू सोता है। दिन चढ़ना मानो तेरी जागृत अवस्था है। नदियों में तू गाता फिरता है। इंद्र-धनुष तेरा झूला है। प्रकाश की बहिया में तू 'क्वीक-मार्च', करता चला जाता है। हाँ यह सच है कि यह रंग-बिरंगा जामा, यह इंद्र-धनुष, ये बादल, ये नदियाँ, ये वृक्ष, ये तरह तरह के कपड़े तेरे से अन्य नहीं। तू ही इन सब सारियों में झलक रहा है। ये संपूर्ण नाम-रूपात्मक कपड़े मलमल या जाली के कपड़े हैं, जो तेरे शरीर को—तेरे तेजोमय स्वरूप को—आधा दिखाते और आधा छिपाते हैं। ऐ प्यारे! ये चादरें और कपड़े क्यों? यह अपने आपको पर्दों और जामों में छिपाना कैसा? यह घूँघट की ओट में चोटें करने के क्या अर्थ? क्या पर्दों को उठाकर बाहर आने में तुझे लाज आती है? क्या तेरा शरीर, तेरा स्वरूप सुन्दर नहीं है जो तू नंगा होने में झिझकता

है ? क्या तेरे सिवा कोई और है जिससे तू शरमाता है ? अगर यह बात नहीं है, तो प्यारे ! फिर ये कपड़े, यह जामा, यह बुर्क़ा, यह पर्दा उतार। आज तो हम तुझे नंगा देखेंगे— उघारा देखेंगे। देखेंगे, और अवश्य देखेंगे। प्यारे ! ओ प्यारे! उतार दे कपड़े।

क्यों ओहले बैह बैह झाकीदा ?
कहो पर्दा कस तो राखीदा ?

अर्थात् ओट में बैठ २ कर ऐ प्यारे ! तू क्यों झाँकता है ? और कहो यह पर्दा किससे तू रख रहा है ?

उसने इसका जो उत्तर दिया वह बिजली की तरह मेरे हृदय में चमक गया। वह उत्तर यह था—' न तो शरम है— मुझे नंगा होने में, न डर है, और न कुरूप हूँ जो कपड़े उतारने में झिझकता होऊँ। लेकिन क्या तू सचमुच मुझसे प्रेम रखता है ? क्या तुझको मुझसे सच्ची प्रीति है ? मैं भी मुद्दत से तेरे प्रेम के मारे बादलों में रो-रोकर और बिजली में आँखें फाड़-फाड़कर तेरी खोज में था। क्या तू मेरा प्रेमी है ? अगर है तो जल्दी कर। कपड़े उतार। तू अपने उतार, मैं अपने उतारूँ। ले, अभी एकता होती है। देर न कर; गले मिल। चिकें और पर्दे फाड़ डाल। दीवारें ढाहा दे, तू नंगा हो। नंगा खुदा से चंगा। यह दर्जा, यह अहंकार, यह शरीर और नाम की पाबंदी (कैद), यह मेरा तेरा, ये दावे, ये तरह-तरह के मंसूबे, ये तरह-तरह की हुकूमतबाज़ियाँ, यह तरह-तरह की हीलासाज़ियाँ (बहाने बाज़ियाँ) ! उतार दे यह कपड़े। अरे उतार दे यह कपड़े ! "।

कपड़े उतारे तो क्या था ? उसकी रज़ाइयां, दुलाइयां उसके लिहाफ़ और तोशक (बादल-वर्षा, रात-दिन) मेरे लिहाफ़

और तोशक हो गए। दोनों एक ही बिस्तर में पड़ गए। अब क्या था।

मन तो शुदम, तो मन शुदी; मन तन शुदम, तो जाँ शुदी।
ता कस न गोयद बादज़ीं, मन दीगरम तो दीगरी॥

अर्थात् मैं तू हुआ, तू मैं हुआ; मैं तन हुआ. तू प्राण हुआ। जिससे कोई पीछे यह न कहे कि मैं और हूं, तू और है।

इस मस्ती के जोश में रज़ाइयां और दुलाइयां भी उत्तर गईं। न कपड़े रहे न रंग-रूप; न दुनियां रही न दीन; नाम और रूप का चिन्ह ही न रहा। आप ही आप अकेला रह गया।

आप ही आप हूँ, याँ गैर* का कुछ काम नहीं।
जाते‡ मुतलक में मिरी शक्ल नहीं, नाम नहीं॥

असली लेक्चर तो बस इतना ही होना चाहिये था—

दिया अपनी खुदी को जो हमने मिटा,
वह जो पर्दा सा बीच में था न रहा।
रहे पर्दे में अब न वह पर्दा निशीं,
कोई दूसरा उसके सिवा न रहा॥

अब सुनिये कि खुदी क्योंकर मिटती है। क्या खुदी का मिटना और है और खुदा का पाना और?—नहीं, एक ही बात है। बहुतों का यह ख़याल है कि खुदी को निकालने से खुदा मिलता है।—

हरदम अज नाखुन खराशम सीन-ए-अफगार रा।
ता जि दिल बेरूँ कुनम गैरे-खयाले-यार रा॥

अर्थात् मैं (अपने) हृदय-तल को इस लिये हरदम नखों से खुर्चा करता हूं ताकि [मेरे] दिल से ग़ैर-यार का ख़याल दूर हो जाय।

---

* दूसरे।
‡ तत्त्व स्वरूप या वास्तविक स्वरूप।

लेकिन अपना तो यह अनुभव है कि खुदा के पाने से खुदी निकलती है। जब यार ही यार रह गया तब खुदी निकल गई।

चुनाँ पुरशुद फिजाए-सीनह अज दोस्त।
खयाले-ख्वेश गुमशुद अज जमीरम॥

अर्थात् मित्र से मेरा हृदयाकाश ऐसा भर गया कि मेरे मन से अपने आप का ख़याल ही खो गया।

एक प्याले में पानी या तेल भरा था। उसमें पारा डाल दिया तो पानी या तेल आप ही निकल गया। बुल्ल्हे शाह नाम का पंजाब में एक साधु हुआ है। वह ज्ञाति का सैयद (मुसलमान) था, जाति का नहीं। (जाति का तो प्रत्येक व्यक्ति ईश्वर ही है।) उसका गुरु ज्ञाति का माली था। वह उस गुरु के पास गया और रो-रोकर कहा कि भगवन्! कृपा कीजिये, दया कीजिये, कोई ऐसा उपाय बताइये कि खुदी (अहंकार) दूर हो और खुदा को पाऊँ। उस समय वह माली प्याज़ की क्यारी से एक गठ्ठी एक तरफ से उखाड़कर दूसरी तरफ़ लगा रहा था। उसने कहा-"खुदा का और क्या पाना है, इधर से उखाड़ना उधर लगाना है।" तुम कहते हो खुदा आसमान पर है। अरे! आसमान पर बैठे बैठे-बादलों में रहते-रहते—तेरे खुदा को ज़ुक़ाम हो जायगा। उखाड़ उस को वहाँ से और जमा दे अपनी छाती में, यहाँ वह गर्म रहेगा, और खुदी के ख़याल (मैं) को उखाड़ अपनी छाती से और बो दे उसे सब शरीरों में। यह प्रेम पैदा कर कि सब शरीरों की "मैं" को अपनी "मैं" समझने लगे। खुदी का निकालना और खुदा का पाना एक ही बात है, दोनों एक समानार्थ हैं। मगर खुदी का यह पर्दा किस तरह मिटता है?

दो रीतियों से, और दोनों रीतियों पर चलना आवश्यक है। देखो, यह रुमाल का एक पर्दा है जो मेरी आँख पर रक्खा हुआ है। इस पर्दे के उठाने का एक उपाय तो यह है कि आँख पर से उठा लिया, या यों सरका दिया या गिरा दिया, अर्थ एक ही है; मगर सब दशाओं में पर्दे को सिर्फ़ सरकाया गया, फाड़ा नहीं गया। हटाया गया; पतला नहीं किया गया। लेकिन अगर पर्दे को सिर्फ़ हटाते ही रहें तो यह पर्दा ऐसा है, जैसे झील या तालाब पर काई। जब हम इस काई को सरका देते हैं तो साफ़ पानी झलकने लगता है। थोड़ी देर के बाद वह काई फिर अपनी जगह पर आ जाती है और स्वच्छ पानी छिप जाता है। यही संसारी लोगों का हाल है। वे खुदी के पर्दे को हटाकर खुदा के दर्शन करते हैं, मगर सिर्फ़ थोड़ी देर के लिये। स्थायी एकता प्राप्त करने के लिये एक और क्रिया की आवश्यकता है।

काई को थोड़ा-थोड़ा तालाब के बाहर फेंकते जायँ तो वह पतली होती जायगी, और धीरे-धीरे तालाब नितान्त साफ़ हो जायगा। इसी तरह उस पर्दे को, जो मनुष्य और ईश्वर के बीच में पड़ा है, अगर सदैव के लिये उठाना है तो उसका उपाय और है। राम हिमालय में रहा है जहाँ उसने कई बार बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री आदि की पैदल यात्रा की है। इसने कई बार रास्ते में साँप देखे जो देखने में मुर्दा दीखते थे, मगर वास्तव में वे सर्दी में जकड़े हुए कुंडली मारे इस तरह पड़े हुए थे मानो उनमें जान ही नहीं है। राम ने उनमें से एकाध को पकड़ कर हिलाया तो मालूम हुआ कि जीते हैं। एक आदमी एक साँप को, जो देखने में मुर्दा था, पकड़ लाया। बच्चों ने ले जाकर उसको धूप में रख दिया।

गर्मी पाकर वह जी उठा। अब तो लगा फुंकारने। एकाध लड़के को उसने डस भी लिया। इसी तरह आपके मन रूपी साँप से आपकी खुदी थोड़ी देर के लिये जब दूर हो जाती है, तो मन चेष्टा रहित हो जाता है। उस समय तुम योग की अवस्था में होते हो। मन के एक तरह से मर जाने का नाम ईश्वरदर्शन व आत्मसाक्षात्कार है। खुदी (अहंकार) के मिट जाने का नाम ईश्वर से अभेद है। किन्तु स्थायी एकता (अभेद) के लिये मन रूपी साँप को मुर्दा सा कर देना ही काफ़ी नहीं है, साँप के दाँत तोड़ डालिये। फिर चाहे साँप जागता हो या सोता। मुर्दा दीखता हो या ज़िंदा, होश में हो या न हो—कोई परवा नहीं, कोई डर नहीं। जब उसमें विष ही न रहा तो फिर उसका चलना फिरना उसके न चलने-फिरने के समान है। वेदान्त तो बे-दाँत है।

एक यत्न तो यह था कि थोड़ी देर के लिये इस मन को मुर्दा बना लो; जैसे किसी सत्संग में बैठिये। वहाँ मन ने प्रेम की ठंढक पाई और मुर्दा हो गया। मगर जब वहाँ से घर आये और गृहिणी ने गर्म-गर्म चूल्हा दिखा दिया, तो गर्मी पाकर ज़हर फिर वैसे का वैसा ही हो गया।

एक मनुष्य ने शराब पीकर घर बेंच डाला। जब होश में आया तो अर्ज़ी दी कि मैंने शराब पीकर घर बेंच डाला था, मेरे होश-हवास ठीक न थे। अब मैं अपने इक़रारनामे से इनकार करता हूं। इसी तरह मनुष्य एक ओर तो कहता है कि 'हे ईश्वर! सब तेरे अर्पण, मैं तेरा, माल तेरा, जान तेरी, घर-बार तेरा। तेरा, तेरा आदि—'। जब घर में गया और स्त्री ने बांह दिखाकर कहा कि मेरा चूड़ा (ज़ेवर) पुराना हो गया, लड़के का ब्याह है, और इसी तरह के खट्टे अचार

खिलाये गये तो सब नशे उतर गये। सब तन-मन-धन ईश्वर से छीन लिया। खुदी की क़ैद में आ फँसे। प्रेम-सुरा ही पीकर थोड़ी देर के लिये सब कुछ ब्रह्मार्पण कर देना भी खूब है। लेकिन सच्चा त्याग तो होश-हवास होते हुए ज्ञान की कृपा से होता है। अगर मनुष्य चाहे तो दुई के पर्दे को सदैव के लिये तोड़ सकता है। उपाय यह है कि पर्दे की तहों को पतला बनाते चले जाओ। इस तरह तहें उतारने से पर्दा पतला होता चला जायगा, यहां तक कि वह इतना पतला हो जायगा कि उसका होना और न होना बराबर हो जायगा पर्दे को सरका देना कर्म है, और सदैव के लिये पर्दे को पतला करते-करते उठा देना ज्ञान है।

अब संसार में जितने धर्म हैं, राम उनको तीन श्रेणियों में विभक्त करता है। उनमें सब आ जांयगे। एक तो वे हैं जिनके पर्दे को राम कहता है "तस्यैवाहं" अर्थात् "मैं उसी का हूं"। फिर वे हैं जिनकी अवस्था को हम "तवैवाहं" अर्थात् "मैं तो तेरा ही हूं" नाम दे सकते हैं। इसके आगे वे हैं जिनका दुई का पर्दा ऐसा पतला हो गया है मानों है ही नहीं "त्वमेवाहं" अर्थात् "मैं तो तू ही हूं"। अनलहक़, शिवोऽहम् है। यह भी पर्दा जब बिलकुल उठ जाता है, तो ये शब्द भी नहीं कहे जा सकते।

"तस्यैवाहं"—"मैं उसका हूं" वालों के लिये ईश्वर ओट (पर्दे) में है, "तवैवाहं"—"मैं तेरा हूं" वालों के लिये ईश्वर समक्ष उपस्थित है। सामने आ गया, पर्दा सूक्ष्मतर हो गया। दूरी बहुत कम रह गई। "त्वमेवाहं"—"मैं तो तू ही हूं" वालों के लिये ईश्वर स्वयं वक्ता हो गया। अन्तर बिलकुल मिट गया। पर्दा बहुत ही सूक्ष्म हो गया। लेकिन

मोटाई के विचार से पर्दा किसी अवस्था में हो तब भी पर्देवाली भेद भाव की दशा कहलाती है, और पर्दा जब बिलकुल उठाया जाय तो वाणी और जिह्वा से परे की अवस्था हो जाती है। पूर्ण ज्ञानी कहता हैः—

अगर यक सरे मूए बरतर परम।
फरोगे तजल्ली बिसोजद परम॥

अर्थात् अगर मैं बाल बराबर भी इससे अधिक उड़ूं तो तेज का प्रकाश मेरे परों को जला दे।

जहां से वाणी और शब्द इस तरह लौट आते हैं जिस तरह दीवार की ओर फेंका हुआ गेंद ठोकर खाकर लौट आता है। वहां पर शब्द भी नहीं, वाणी भी नहीं। वहां अनलहक़,ब्रह्मास्मि,शिवोऽहम् कहने का पतला पर्दा भी न रहा। जहां सच्चा प्रेम होता है, वहां प्रेम के बढ़ते-बढ़ते दूरी या अंतर का रहना असंभव है! पर्दा कहीं रह सकता है? कदापि नहीं। सांसारिक प्रेम का एक उदाहरण लीजिये। यहां सब प्रकार के मनुष्य मौजूद है। बताइये किसका किसके साथ अधिक प्रेम है। इसका उत्तर यह है—"उसके साथ जिससे दुई का अंतर थोड़ा है।" मनुष्य को जो प्रेम अपने भाई से है, दूसरे से नहीं। जैसी पुत्र से प्रीति होगी, भाई से न होगी। क्या कारण है? पुत्र को जानता है कि वह मेरा खून है—मेरा हृदय मेरा अंतःकरण है—मेरी जान, मेरा प्राण है। आकर्षण का नियम (Law of Gravitation) भी यही है। जितनी ही दूरी कम होती जायगी, दूरी के घटाव के हिसाब से आकर्षण बढ़ता जायगा। ज्यों ज्यों दूरी कम होती जाती है, प्रेम अधिक होता जाता है, और यही दशा उसके अक्स [प्रतिबिम्ब] की है। ज्यों ज्यों प्रेम बढ़ेगा, अंतर कम होता जायगा।

वादए-वस्ल चूं शवद नजदीक।
आतिशे-शौक तेजतर गर्दद॥

अर्थात् मिलने या एक होने का वादा जितना ही निकट होता जाता है, शौक़ [आनन्द] की अग्नि उतनी ही तेज़ होती जाती है।

स्त्री या प्रियतमा के साथ भाई और बेटे से भी अधिक प्रेम होता है। पुत्र तो खुद हड्डी और चाम से पैदा हुआ था, स्त्री को तुम अर्द्धांगी, अपना ही आधा शरीर कहते हो, अपना ही दूसरा अपना-आप समझते हो। प्रियतमा के साथ क्या प्रेम इसका सहन कर सकता है कि समय या स्थान की दूरी दोनों के बीच में पड़ जाय? कदापि नहीं। अगर समय की दूरी है तो जी चाहता है कि दुनिया की जंत्रियों में से जुदाई के दिन साफ़ उड़ जायँ, अगर पच्चीस मील की दूरी है तो इच्छा होती है कि यह दूरी न रहे, अगर सिर्फ़ दीवार का बीच है तो कहते हो कि यह भी बीच से हट जाय तो अच्छा है, अगर कपड़े का अंतर रह गया तो जी चाहता है कि यह कपड़ा भी बीच से उठ जाय, अगर हड्डी और चाम का अंतर रह गया है, तो ए छाती, हड्डी, खून और मांस! निकल-निकल। बिल्कुल निकल जा। यार हम, हम यार।

मन तो शुदम तो मन शुदी, मन तन शुदम तो जाँ शुदी।
ता कस न गोयद बाद-अज़ीं, मन दीगरम तो दीगरी॥

जब तक तुम दोनों एक नहीं हो जाते, प्रेम दम नहीं लेने देता। ये दुनिया के प्रेम के दर्जे हैं। जब दुनिया के प्रेम के ये दर्जे हैं, तो क्या ईश्वर के प्रेम में कोई और दर्जे हो जायँगे? संसार में एक यही नियम है जो तीनों लोकों पर प्रभाव डाले हुए है, जो त्रिलोकी पर शासन करता है। जब प्रेमी की

आँखों से आँसू के बूँद टपकते हैं तो वही आकर्षण का नियम काम करता है, जो आकाश में तारे टूटते समय। इधर आँसू का बूँद गिरा, उधर तारा टूटा, एक ही नियम की बदौलत। संसारी प्रेम और ईश्वरीय प्रेम दोनों के लिये एक ही नियम है। अगर प्रेम सच्चा है तो जब तक पूर्ण एकता न हो लेगी वह विश्रान्ति न लेने देगा।

अब राम वे उदाहरण देगा जिनमें दिखाया जायगा कि पर्दा मोटे से मोटा क्यों न हो. बिना पतला किये भी सरक सकता है। मगर वही थोड़ी देर के लिये। हिंदू-मुसलमानों के यहाँ सैकड़ों दृष्टांत मौजूद हैं जिनसे विदित होगा कि सच्चे प्रेमभरे भक्तों और बुजुर्गों की सचाई के बल से कैसा दलदार पर्दा उठ जाता है। मौलाना रूम ने एक गड़रिये का दृष्टांत दिया है कि यह गड़रिया तूर पर्वत पर एक पहाड़ी की चोटी पर खड़ा हुआ प्रार्थना कर रहा था कि "हे ईश्वर! दया कर। द्रवित हो। अपने दर्शन दे। देख मैं तेरे लिये अपनी खाँगड़ बकरियों का ताज़ा २ दूध लेकर आया हूं। अपनी झाँकी दिखा। मैं तुझे यह दूध पिलाऊँगा। मैंने दही जमाया है जिससे तेरे बाल धोऊँगा। तेरी मुट्ठी भरूँगा। मैंने सुना है, तू एक है, अद्वितीय और है, अकेला है। हाय! जब तू चलता होगा तो तेरे पैर में काँटे चुभते होंगे, रोड़े चुभते होंगे। कौन तेरे काँटे निकालता होगा। कौन रोड़े अलग करता होगा। मैं तेरे काँटे निकालूँगा, रास्ते से रोड़े अलग करूँगा। हे प्रभो, कृपा कर। मैं पंखा झलूँगा, तेरे पैर दबाऊँगा, तेरे जुएँ निकालूँगा।" वह यह कहता और रोता जाता था। इतने में हज़रत मूसा पधारे। दण्डा निकाल बेचारे की पीठ पर दे मारा और कहा—"ऐ काफ़िर! तू क्या बकता है? खुदा को इलज़ाम

लगाता है ? खुदा की शान में कुफ़्र के कलमे निकालता है ? कहता है, मैं तेरे जुएँ निकालूँगा। अरे ज़ालिम ! क्या इस तरह खुदा मिलता है ?" गड़रिये ने कहा—"क्या खुदा न मिलेगा ?" मूसा ने कहा—"नहीं, तुझ पापी को न मिलेगा।" यह सुनकर बेचारा गड़रिया कहने लगा—"अगर तू नहीं मिलता तो ले हम भी नहीं जीते।" यह कहना था कि उसी समय एक बूढ़े पुरुष ने कूदकर उसके कंधों पर हाथ रख दिया। यदि ईश्वर है, और है क्यों नहीं, और अगर वह ऐसे अवसरों पर भी हाथ न रक्खे तो अपने हाथ काट डाले।

सद जाँ फिदाए आँ कि जुबानो-दिलश यकेऽस्त।

अर्थात् सैकड़ों प्राण उसपर न्यौछावर हैं जिसकी वाणी और मन एक है।

इस का नाम है धर्म ! धर्म शरीर और बुद्धि का आधार है। मन और बुद्धि का उसमें लीन हो जाना ही धर्म है। उस व्यक्ति में, चाहे वह किसी प्रकार का या किसी ढंग का था, उसके शरीर, नाम, मन, बुद्धि कुछ ही थे, मगर वह ईश्वर को कोई दूसरा नहीं जानता था। वह उसकी जाति (तत्त्व) में लीन हो गया। सचाई इसको कहते हैं, विश्वास इसी को कहते हैं। मूसा ने कहा—"गड़रिये ! तू ईश्वर से ठठोली कर रहा है ?" राम कहता है कि जो लोग इस गड़रिये से अधिक ईश्वर का ज्ञान रखते हैं, लेकिन अगर सचाई नहीं रखते, अगर उनकी वाणी और मन एक नहीं, तो वे लोग ईश्वर से मखौलबाज़ी करते हैं। वह गड़रिया ईश्वर को जानता था। ईश्वर को माननेवाले की बात और होती है और जानने वाले की और। यदि यहाँ कोई अँगरेज़ आ जाता है जैसे डिप्टी-कमिश्नर, कमिश्नर या लेफ़्टेंट गवर्नर, तो सब

के सब उठ खड़े होते हैं। सब चुप, काटो तो शरीर में खून नहीं। उनको उसके सामने झूठ बोलने का साहस नहीं होता, किसी स्त्री की ओर कुदृष्टि से देखने की हिम्मत नहीं होती, वह कोई और भी बुरा काम नहीं करते। परमेश्वर को मानते और सर्वव्यापी व सर्वदर्शी जानते हो? मगर हाय ग़ज़ब! उस सर्वव्यापी और सर्वदर्शी को मानते हुए किसी स्त्री को देखो और बुरी दृष्टि पड़े? उस स्त्री के नेत्रों में परमेश्वर का प्रकाश था, उससे आँखें लड़ाते और ईश्वर को मानते तो क्या पछाड़ खाकर न गिर पड़ते? अब राम कहता है कि शाबाश है उस गड़रिये को, उस पर से सब ईश्वर से ठठोली करने वाले न्यौछावर हैं।

इस प्रकार के दृष्टांत और भी हैं। एक हिंदू का दृष्टांत अब राम देगा। एक लड़का हुआ है नामदेव और उसका नाना था वामदेव। यह वामदेव ठाकुर जी की मूर्ति की पूजा करता था। लड़का अपने नाना के पास आकर कहता है, नाना जी, यह क्या है? नाना ने कहा:—"ठाकुर है, परमेश्वर गोपाल के रूप में आया हुआ है।" लड़के ने गोपाल जी की मूर्ति देखी। कृष्ण एक छोटा सा बालक है, वह घुटनों के बल चल रहा है, वह मक्खन का पेड़ा चुराये हुए चुपके २ लौटा आ रहा है। कुछ दूर आगे बढ़कर पीछे घूम कर देख रहा है कि माँ ने तो नहीं देखा। एक हाथ में तो मक्खन है और दूसरा हाथ भूमि पर टिका हुआ है। यह पत्थर की मूर्ति है या किसी धातु की? यह बालगोपाल प्यारे कृष्ण की मूर्ति है। उस लड़के ने इस ईश्वर को देखा। और इस उदाहरण के अनुसार कि:—

कुनद हमजिंस बा हमजिंस परवाज।
कबूतर बा कबूतर काज बा काज।

अर्थात् हमजिंस अपने हमजिंस के साथ उड़ा करता है, जैसे कबूतर कबूतर के साथ और कौआ कौआ के साथ।

छोटा सा बच्चा बड़े भारी ईश्वर से कैसे प्रीति करता? बच्चे के लिये बच्चा ही ईश्वर होगा तो उसको उसका प्रेम होगा। प्रेम किसी के कहने सुनने से नहीं होता। प्रेम वहीं होगा जहाँ हमारा इष्ट होगा। छोटे से नामदेव के मन में निराकार परमेश्वर का ख़याल क्योंकर जमता? उसके मन में तो यही माखनचोर परमेश्वर जमा। राम छोटा था तो उसके मन को भी इसी चोर ने चुराया था। लड़का अपने नाना से कहता है:- "मैं उसकी पूजा करूँगा।" नाना ने कहा:-"तू उसकी पूजा के योग्य नहीं है, न नहाता है न धोता है।" एक दिन नाना चला गया तो नानी से कहा:-"नानी, ठाकुर जी को नीचे उतार दो, मैं पूजा करूँगा"। नानी ने कहा:-"कल सवेरे जब नहा धो लोगे।" इस रात को वह कई बार चौंक पड़ा और नानी व मां को जगाकर कहता है:-"सबेरा हो गया, ठाकुर जी को नीचे उतार दो"। वह कहती है, "अभी रात है, सो रहो।" अंत में सबेरा हुआ। रात बीती। लड़का नदी में डुबकी मारकर जल्दी से आ गया। विधि विधान तो वह जानता न था, पानी जो लाया था उसमें ठाकुर जी को डुबो दिया। अब मां से लड़का कहता है:-"दूध लाओ।" बड़ी कठिनता से दूध आया। कुछ कच्चा कुछ पक्का। सामने रख दिया कि पीजिये। बच्चे को ख़बर न थी नाना झूठमूठ ठाकुर जी को भोग कराते थे। मगर बच्चे में सचाई थी। प्रायः लोगों का ज्ञान केवल जिह्वा पर होता है, हृदय में नहीं। मगर बच्चे में यह चतुरता न थी। उसके रोम रोम में प्रेम भर गया था। वह दूध रखकर कहता है:-"महाराज पियो" ठाकुर नहीं पीता। अरे क्या तेरा

हृदय पत्थर का हो गया। बच्चा तो बच्चा। मा अपनी सारी, अपना दुपट्टा बेच डाले, मगर बच्चे का हुक्म बजा लाना होगा। ऐ ठाकुर, तेरे मन में इतनी भी दया नहीं। तू तो संसार का माता-पिता है।

सीमी बरी तो जानाँ लेकिन दिले तो संगऽस्त।
दरसीम संग पिनहाँ दीदम न दीदः बूदम॥

अर्थात् ऐ प्यारे! तू तो चांदी जैसा है, लेकिन हृदय तेरा पत्थर का है। हाय! चांदी के भीतर पत्थर छिपा है, ऐसा तो मैंने कभी न देखा था।

ऐ परमेश्वर! यह प्यारा भोला बच्चा कह रहा है कि दूध पी लो, और तू नहीं पीता। बच्चे ने सोचा कि शायद आंख मीचने से ठाकुर दूध पिये, उसने आंखें मीचलीं। मगर अँगुलियों के बीच से कभी २ देखने लगता कि अभी पीने लगे या नहीं। पर उसने नहीं पिया। बच्चे ने सोचा, शायद जीभ हिलाने से पियें। बरबराने लगा। मगर उसने फिर नहीं पिया। लड़के को रात की थकावट थी और भूखा भी था, एकँद्र तीन घंटे बीत गये, मगर ठाकुर जी नहीं पसीजे। हाय भगवान्! राम को भी ऐसे ठाकुर पर क्रोध आता है। लड़का रोने और बिलबिलाने लगा। रोते रोते गला बैठ गया, आवाज़ नहीं निकलती। सारा खून आंसू बनकर निकल आया। मगर ठाकुर जी ने दूध नहीं पिया। आखिर लड़के को गुस्सा आ ही गया। यह आत्मा कमज़ोर को नहीं मिलती। दुर्बल की दाल नहीं गलती। यह लड़का देखने में तनक सा था, मगर इसमें बल बड़ा था। बल क्या था, दृढ़ता और विश्वास। यह विश्वास की आँधी ग़ज़ब की आँधी है। हट जाओ वृक्षो मेरे आगे से, हट जाओ नदियो मेरे मार्ग से, उड़

जाओ पहाड़ो मेरे समक्ष से। यह विश्वास, यह यक़ीन यह निश्चय यही सच्चा बल है। कहते हैं फ़रहाद में यही बल था। मारता है कुलहाड़ा, पहाड़ गिर रहे हैं। विश्वासवाले जब चलते हैं तो दुनिया को एकदम से हिला सकते हैं। इस लड़के में भी यह बल था। किसी ने कभी इसको बर्ता नहीं पर यों ही कह उठते हैं कि वह गप है। इस लड़के का बल उसको खींचे लाता है।

> असर है जज्बे-उल्फत में तो खिंचकर आही जायँगे।
> हमें परवाह नहीं हमसे अगर वह तन के बैठे हैं॥

लड़के ने एक तलवार पकड़ ली और उसको गले पर रखकर कहता है, "अगर तुम दूध नहीं पीते तो हम भी नहीं जिएँगे। जिएँगे तो तेरी ख़ातिर, नहीं तो नहीं जिएँगे"।

> मरना भला है उसका जो अपने लिये जिये।
> जीता है वह जो मर गया हो तेरे ही लिये॥

अगर अमेरिका में मनोविज्ञान शास्त्र (Psychology) के संबंध में ऐसे अनुभव किये गये हैं कि मेज़ घोड़ा हो जाय तो (ज़रा अपने यहाँ की भी कहानी मान लो) यह भी संभव है। जिस समय लड़का गले पर छुरी रख रहा था तो एकदम से नहीं मालूम आकाश से या बालक के हृदय से वह मूर्तिमान ईश्वर सशरीर होकर आ बैठा। लड़के को गोद में ले लिया और हाथ से दूध का प्याला उठाकर दूध पीने लगा। यह दृश्य देखकर बच्चा रोते रोते हँसने लगा। जब देखा कि वह सारा दूध पिये जाता है तो एक थप्पड़ मारकर कहने लगाः-"कुछ मेरे लिये भी छोड़ो।" यह वह लड़का है जिसकी आँख का पर्दा बहुत ही मोटा था। उसको ईश्वर का ज्ञान न था। मगर पर्दा मोटा हो या पतला, प्रेम, चित्तशुद्धि, सच्चापन

विश्वास वा निश्चय वह चीज़ है कि एक बार तो उसको सरका ही देता है। जब एक छोटे से लड़के ने यह कर दिखाया तो धिक्कार है पुरुष को।

> कीडा जरा सा कि जो पत्थर में घर करे।
> इन्सान वह क्या जो ना दिले-दिलबर में घर करे।

> सिजदए मस्ताना अम बाशद नमाज।
> दर्दे दिल बाओ बुवद कुरआने मन॥

अर्थात् मस्ताना सिजदह (झुकना) मेरी नमाज़ है और उसके साथ दिल का दर्द मेरा कुरान है।

सच्ची नमाज़ यह है कि मारे मस्ती के लड़खड़ा रहा हो कभी इधर गिरता हो, कभी उधर। एक माला में एकदम में हज़ार मालाओं का असर होता है, मगर दिल से माला जपी जाय तो। तिब्बत में एक चक्र है जिसमें सैकड़ों मालायें एकदम से घूम जाती है। अगर एक बार ईश्वर का नाम लेते समय प्रत्येक बाल की ज़बान एक साथ ही बोल उठे, तो ऐसे एक बार जो जबान से निकलता है वह उसको हज़ार दिलों से ज़रब दे आता है। तात्पर्य यह है कि जो निकले, हृदय से निकले, अंतःकरण से निकले। स्यालकोट में राम के एक मित्र थे जिन्होंने जीवन भर में नमाज़ नहीं पढ़ी। यहाँ जो मुसलमान लोग हैं, वे मेरी बात का बुरा न मानें। बच्चे में पूर्ण प्रेम होता है जिससे वह मा को चपत मारता है, उसकी चोटी खींचता है। स्यालकोट में चोर बहुत थे, उनको बंद करने के लिये वारबर्टन साहब को भेजा गया। पुलीस का वह एक नामी अफ़सर था। उसने वहाँ जाकर ऐसा प्रबंध किया कि नीच जातियों की तीन बार हाज़िरी ली जाती थी जिससे चोरी थोड़ी बहुत बंद हो गई थी। एक दिन शुक्रबार को सब लोग

नमाज़ पढ़ने जा रहे थे। लोगों ने एक मस्त शेख़ से पूछा, तुम क्यों नहीं जाते? उन्होंने कहा, लोगों ने चोरी की है, इस लिये हाज़िरी देने जाते हैं; मैने चोरी नहीं की। शरीर चोरी का माल है, जो लोग इस शरीर को चुरा बैठे हैं, अर्थात् ख़ुदी में डूबे रहते हैं, वह यह ख़याल करते हैं कि मैं ब्राह्मण हूँ, क्षत्रिय हूँ, वैश्य हूँ, मैं मुसलमान हूँ। हाँ, एक बार शेख़ जी ने नमाज़ पढ़ी। मगर इस निश्चय सेः—

सिजदे में सर झुकाऊँ तो उठाना हराम है।
सिजदे में गिर पड़ूँ तो फिर उठाना मुहाल है॥
सर को उठाऊँ क्योंकर हर रग में यार है॥

नमाज़ पढ़ रहे थे। सिजदे को सर झुकाया मगर नहीं उठा। प्राण छूट गये। यह नमाज़ पढ़ना है। मुसलमान के अर्थ हैं इसलामवाला—निश्चयवाला। नामदेव के हृदय में उस समय निश्चय था इसलाम था और सचाई थी। जिसने ईश्वर को एक बार सशरीर कर दिखाया। गड़रिये के हृदय में भी सच्चा इसलाम था। वही निश्चय था, वही विश्वास था। इसी लिये परमेश्वर ने मूसा को झिड़का—

तू बराए वस्ल कर्दन आमदी।
नै बराए फस्ल कर्दन आमदी॥

मी रसी दर काबा जाहिद नखद अज राहे तरी।
जुहदे खुश्के सौमे तो बे दीदए—गिरियाँ अबल॥

अर्थात् (ऐ मूसा!) तू तो (मुझ से) अभेद कराने के लिये (दुनिया में) आया था, न कि भेद कराने के लिये।

ऐ ज़ाहिद (तपस्वी)! तू काबे तो पहुँचता है (मगर) तरी की राह से नहीं जाता है। सूखे रोज़े (व्रत) और परहेज़गारी (तप) बिना आँसू-भरी आँखों के व्यर्थ हैं।

सूखी नमाज़, सूखी माला, सूखा जप, सूखा पाठ जिनमें न आँसू टपके न हृदय हिले, ऐसी खुश्की के रास्ते तू मक्का को जाता है, लोग तरी के रास्ते से जल्दी पहुँचते हैं। (अगर इस अवसर पर विषय इधर का उधर हो जाय तो कुछ आश्चर्य नहीं।)

चुनी ताकत कुजा दारम कि पैमाँ रा निगेहदारद।
बिया ऐ साक़ी ओ बिशकन ब यक पैमाना पैमाँ रा॥

अर्थात् मैं कब ऐसी शक्ति रखता हूँ कि वादे को सामने रक्खूँ (अर्थात् अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहूं), ऐ साक़ी (मस्ती की शराब पिलाने वाले)! आ, और एक पैमाने (प्याले) से पैमान (अहद, वादे) को तोड़ दे।

इन दो दृष्टांतों से मोटा पर्दा उठ गया। अब एक और दृष्टांत लीजिये जिसमें पर्दा पतला था और उठ गया। पंजाब में बाबा नानक हुए हैं, वह भी सब की तरह दूसरे दर्जे के थे। एक ज़माने में मोदीख़ाने में नौकर थे। उस समय कुछ ठग साधु बनकर उनके पास आये। उन्होंने अन्न भर भरकर उनको देना आरंभ किया। ऊपर से उनको गिनते जाते थे, लेकिन हृदय में कुछ और ही विचार था।

इश्क के मकतब में मेरी आज बिस्मिल्लाह है।
मुँह से कहता हूँ अलिफ़ दिल से निकलती आह है॥

मस्ती ही इस पार्थिव पूजा प्रेम में काम कर रही है। वह ऊपर से तो दो, तीन, चार, पाँच, सात कहते जाते हैं मगर हृदय में इन गिंतियों का कुछ ध्यान नहीं। जब वह तेरह तक पहुँचे सब भूल गये और उनपर एक आत्मविस्मृति की अवस्था आ गई। अब उन्होंने तेरह से यह कहना शुरू किया—तेरे हो गये, हो गये। बारह और तेरह। तेरा और तेरा। भर

भरकर टोकरे फेंकते जाते थे और तेरा तेरा कहते जाते थे। यहाँ जो कुछ है, तेरा ही है और सब तेरे ही हैं। यह कहकर देहाभिमान से रहित होकर भूमि पर गिर पड़े। ज़बान बंद हो गई, मगर हर रोएँ से यह आवाज निकल रही थी कि "मैं तेरा हूँ।" इस दृश्य का प्रभाव यह हुआ कि वे बने हुए साधु ठगे गये। यद्यपि वे स्वयं चोर थे, लेकिन परमेश्वर ने उनको चुरा लिया। वह सब चोरों का चोर है। ठगों पर यह दशा आ गई कि वे भी तेरा तेरा कहने लगे। यह वह दृष्टांत है जिसमें ज्ञान की दृष्टि से पर्दा उठ गया है, लेकिन क्षण भर के लिये।

अब एकाध दृष्टांत "मैं तू हूं" का और दिया जायगा। आत्मानुभव की दृष्टि से बहुत लोग हैं जिन्हों ने इस मञ्ज़िल को तय किया है। दो प्रकार का पढ़ना होता है। राम जब कालेज में था तो इसका हाथ बहुत तेज़ चलता था। राम की परीक्षा हुई। पर्चा बहुत लम्बा था। उसमें सोलह प्रश्न थे, जिनमें आठ प्रश्नों के हल करने की शर्त थी। मगर राम ने सब सवाल हल कर डाले और कापी पर लिख दिया कि इनमें कोई आठ देख लिये जांय। पर और विद्यार्थी इतना तेज़ नहीं लिख सकते थे। इन सोलह प्रश्नों के उत्तर उनके मस्तिष्क में तो थे, मगर नखों में नहीं उतरे थे। इसी तरह से बहुत लोगों ने इसको भी क्रियात्मक रूप से नहीं जाना है। इसी प्रकार राम दूसरा दृष्टांत यह देगा कि वह नखों में उतर आ सकता है। अरब में मोहम्मद साहब से पहले लोग जंगली थे। अब हम विस्मित होते हैं कि मोहम्मद साहब ने कैसी योग्यता से इन जंगली लोगों को एकत्र कर लिया। इनके मिलाने का एक कारण यह था कि इनको इकट्ठा करके ईश्वर के निकट लाना था। राम ने जापान में दो जनरिक्षा

(गाड़ी) वालों में असबाब पर लड़ाई होते देखी। दोनों में से हरएक हमको अपनी 'रिक्षा' में बिठाना चाहता था। जब उनकी आंखें परस्पर लड़ीं तो दोनों हँस पड़े। उस समय राम को बिश्वास हुआ कि आत्मा आंख में रहती है।

जब आंखें चार होती हैं मुरव्वत आ ही जाती है।

इसी तरह जब ज़बानें एक होती हैं तो प्रेम हो जाता है। जब ईश्वर के निकट एक ज़बान होकर प्रार्थना करते हैं तो मिलाप हो ही जाता है।

पहला शब्द 'ओम्' है जो बच्चा भी बोलता है। बीमारी में ॐ ॐ कहकर ही धीरज होता है। जब बच्चे प्रसन्न होते हैं तो उनके मुँह से भी ॐ ॐ निकलता है। यह प्रकृति का नाम है। इसपर किसी का ठेका नहीं है। कुरान में 'अलम' जब आता है, तो वह 'ओम्' ही है। जैसे जलाल-उलदीन, कमालउ-लदीन में लकार नहीं पढ़ी जाती। ज़रा देर के लिये सब 'ओम्' बोल दो (निदान, थोड़ी देर के लिये सब ने उच्च स्वर से 'ओम्' का उच्चारण किया जिससे खुला मैदान गूंज उठा।)

ऋषीकेश के पास का जिक्र है कि गंगा के इस पार बहुत साधू रहते थे और उस पार एक मस्त रहता था। उसके रंग-रेशे में (अनलहक़) शिवोऽहं बसा हुआ था। रात दिन यह आवाज़ आया करती थी—"शिवोऽहं, शिवोऽहं, शिवोऽहं शिवोऽहं।" एक दिन वहां एक शेर आ गया। और साधू इस पार से देख रहे थे कि शेर आया और उसने महात्मा की ओर रुख किया। वह महात्मा शेर को देख कर उच्च स्वर से कह रहा था "शिवोऽहं शिवोऽहं"। उसकी धारणा में यह जमा हुआ था कि यह शेर मैं ही हूं, सिंह मैं ही हूं। स्वयं

केसरी के शरीर में स्वर भर रहा हूं "शिवोऽहं शिवोऽहं"। वनराज ने आकर इनके कंधे को पकड़ लिया तो वह [महात्मा] आनन्द के साथ सिंह के रूप में नर-मांस का स्वाद ले रहे थे और आवाज निकल रही थी "शिवोऽहं शिवोऽहं"। दीवाली में खांड़ के खिलौने बनते हैं। खांड़ के हिरन, और खांड़ के शेर। अगर खांड़ का हिरन अपने आप को नाम रूप रहित विशेषण के साथ समझे कि मैं हिरन हूं तो क्या यह कहेगा कि खांड़ का शेर मुझको खा रहा है। यदि वह अपने आप को खांड़ मान ले तो खांड़ का मृग कह सकता है कि खांड़ के रूप में मैं ही इधर हरिन और उधर शेर हूं। इसी तरह जब तुम जानो कि तुम्हारी असलियत क्या है। वह इस खांड़ के अनुरूप ईश्वर की जाति अर्थात् ऐश्वरीय है। अतः इस खांड़ के शेर बनने की हैसियत से तुम ईश्वर की हैसियत से यह कह सकते हो कि मैं इधर हरिन और उधर शेर हूं।

पगडी पाजामा दुपट्टा अँगरखा, गौर से देखा तो सब कुछ सूत था।
दामनी तोडी तो माला को गढा, पर निगाहे हक में था वही तिला॥

प्यारे! यह महात्मा वह दृष्टि रखते थे। जिस समय सिंह खा रहा था उस समय वह क्या २ स्वाद ले रहे हैं। आज नर-रक्त हमारे मुँह लगा। टाँग खाई तो भी "शिवोऽहं शिवोऽहं" मुंह से निकला। शेर भी चिल्ला रहा है "शिवोऽहं शिवोऽहं"। पर्दा पहले ही पतला था, मगर सरकाया गया।

सिकंदर जब भारतवर्ष में आया और उसने देखा कि जितने देश मैं ने जीते सब से अधिक सचाईवाले बुद्धिमान् और रूपवान् भारतवर्ष में ही देखे। उसने कहा इस भारतवर्ष के सिर अर्थात् तत्ववेत्ताओं और ज्ञानियों को देखना चाहता हूँ। सिकन्दर को सिंध के किनारे ले गये। वहाँ एक अवधूत

बैठे थे। सिकंदर सारे संसार का सम्राट, वहाँ लँगोटी भी नहीं। सामना किस ग़ज़ब का है। सिकंदर में भी एक प्रताप था। मगर मस्त की निगाह तो यह थीः—

शाहों को रोब और हसीनों को हुस्नो-नाज।
देता हूँ, जब कि देखूँ उठाकर नजर को मैं॥

सिकंदर पर उस मस्त का रोब छा गया। उसने कहाः-"महाराज! कृपा कीजिये। यहाँ के लोग हीरे को गुदड़ी में लपेट कर रखते हैं। पश्चिम में ज़रा ज़रा सी चीज़ों की बड़ी क़द्र की जाती है। मेरे साथ चलो, मैं तुम्हें राज पाट दूँगा, धन दूँगा, संपत्ति दूँगा, हीरे-जवाहिरात दूँगा, जो कुछ चाहो सब दूँगा, लेकिन मेरे साथ चलो।" महात्मा हँसे और कहा "मैं हर जगह हूँ, मेरी दृष्टि में कोई जगह नहीं है।" सिकंदर नहीं समझा। उसने कहाः-"अवश्य चलिये।" और वही लालच फिर दिलाया। मस्त ने कहाः—"मुझे किसी चीज़ की परवा नहीं, मैं अपना फेंका हुआ थूक चाटनेवाला नहीं।" सिकन्दर को क्रोध आ गया और उसने तलवार खींच ली। इस पर साधु खिलखिलाकर हँसा और बोलाः-"ऐसा झूठ तो तू कभी नहीं बोला था।"

मुझको काटे कहाँ है वह तलवार।

बच्चे रेत में बैठकर रेत अपने पैरों पर डालते हैं। आप ही घर बनाते हैं और आप ही ढाते हैं। रेत का क्या बिगड़ा जो पहले थी वह अब भी है। प्यारे! इसी तरह उस साधु की दशा थी। यह शरीर उसको बालू के घर की तरह है जो लोगों की कल्पना में उनकी समझ का घर बना था। मैं तो बालू हूँ। घर कभी था ही नहीं। अगर तुम या जो कोई इस घर को बिगाड़ता है, वह अपना घर खराब करता है।

तारे क्या रोशनी से न्यारे हैं।
तुम हमारे हो, हम तुम्हारे हैं॥

उत्तर सुनकर सिकंदर के हाथ से तलवार छुट पड़ी।

एक भंगिन थी जो किसी राजा के घर में झाडू दिया करती थी। कभी कभी उसको सोना या मोती इनाम में मिल जाता था। कभी गिरे पड़े उठा लाती थी। उसका एक लड़का था, जो बचपन से परदेश गया हुआ था। जब वह पंद्रह वर्ष का हुआ तो घर आया। देखा कि उसकी माँ ने झोंपड़ी में लालों का ढेर लगा रक्खा है। उसने पूछाः-"ये चीज़ें कहाँ से आईं"? मेहतरानी ने कहाः-' बेटा, मैं एक राजा के यहाँ नौकर हूँ। ये उनके गिरे-पड़े मोती हैं, जिनका यह ढेर है।" लड़का अपने मन में कहने लगा, जिसके गिरे पड़े मोती ऐसे उत्तम हैं, वह आप कैसी रूपवती होगी। यह ख़याल आया था कि उसके मन में प्रेम छा गया और अपनी माँ से कहने लगा कि मुझे उसके दर्शन कराओ। ये तारे-सितारे, यह चंद्र-सूर्य, ये झलकती हुई नदियाँ, यह सांसारिक रूप-सौंदर्य उस सचाई के गिरे-पड़े मोती हैं। अरे जिसके गिरे-पड़े मोतियों का यह हाल है तो उसका अपना क्या हाल होगा।

लगा कर पेड़ फूलों के किये तकसीम गुलशन में।
जमाया चाँद-सूरज को सजाये क्या सितारे हैं॥

जिस समय कन्याओं का विवाह होता है, उसके डोले पर से रुपए-अशर्फ़ियाँ न्यौछावर करते हैं, और ऐ महात्माओ! तुम उन चीज़ों को चुनो। राम की आँख तो उस दुलहिन के साथ लड़ी। जिसका जी चाहे इन मोतियों को भरे। राम के पास तो जामा भी नहीं है, फिर दामन कहाँ से लावे!!!

ॐ! ॐ!! ॐ!!!

व्यावहारिक वेदान्त
और
आत्म-साक्षात्कार ।

ता० ११ सितम्बर १९०५ को सायंकाल ६॥ बजे फैजाबाद में दिया हुआ व्याख्यान ।

अमेरिका में अमली अर्थात् व्यावहारिक वेदान्त का बर्ताव होता है और इसी से वह देश संपत्तिवान है । व्यावहारिक वेदान्त यही है कि अपने आपको सारा देश ही नहीं, वरन् संपूर्ण संसार अनुभव करे; और अपने आपको एक शरीर में परिच्छिन्न करना ही एकाकी कारावास समझे ।

इतना छोटा (हदूदरबा) क्षेत्र-फल नहीं, पगड़ी-जोड़ा क्षेत्र-फल नहीं, टोपा-जूता क्षेत्र-फल नहीं । मैं साढ़े तीन हाथ के टापू (देह) में क़ैद नहीं हूँ, वरन् सब की आत्मा—सब का अपना आप—मैं ही हूं । पाताल देश (अमेरिका) के लोगों ने भी, इस बात को मान लिया है । हर एक को भाले की नोक के नीचे या प्रकृति के डंडे के ज़ोर से स्वीकार करना ही पड़ेगा कि आत्मा के सिवाय और कोई स्थान आनंद का नहीं है । आनंद का भंडार यदि है तो वह केवल अपना आप (आत्मा) ही है । उसी में स्वतंत्रता है, उसी में शांति और आनंद है । मद्य पीना लोग क्यों नहीं छोड़ते ? आप लोग हज़ारों यत्न करते हैं, टेम्परैंस सोसाइटियाँ सदैव उसे त्याग देने का उपदेश करती रहती हैं, मगर क्या कारण है कि इस

पर भी लाखों व्यक्ति इस सत्यानाशिनी मदिरा को नहीं छोड़ते। कारण यह है कि वह अपने आत्मदेव की कुछ थोड़ी सी झलक (स्वतंत्रता) दिखला देती है, अथवा शरीररूपी बंदीगृह से थोड़ी देर के लिये छुटकारा देती है। हाय स्वतंत्रता! प्रत्येक व्यक्ति इसी का इच्छुक है, समस्त जातियाँ और समाजों में सदैव 'स्वतंत्रता स्वतंत्रता' का ही शोर सुनने में आता है, बच्चे भी इसी के अभिलाषी हैं। बच्चों को रविवार सब दिनों से अधिक प्यारा क्यों लगता है ? केवल इस लिये कि वह उनको ज़रा स्वतंत्रता दिलाता है अर्थात् उस दिन बच्चों को छुट्टी मिलती है। यह छुट्टी का दिन केवल बच्चों को ही प्रसन्न और मुदित नहीं करता वरन् इसके नाम से स्कूल के मास्टरों और दफ़्तर के क्लर्कों के पीले चेहरों पर भी सुर्ख़ी आ जाती है।

प्रयोजन यह कि प्रत्येक को स्वतंत्रता का आनन्द प्यारा है। क्यों न हो? मुक्त स्वभाव तो इसकी अपनी जाति ही है। अपनी जाति प्रत्येक को निस्संदेह प्यारी से भी प्यारी होती है। हाँ जब कोई प्यारा अपनी जाति से तटस्थ होकर सांसारिक बंधनों और पदार्थों में इस स्वतंत्रता के पाने का प्रयत्न करता है, तो वह अपने आपको अंततः ख़ाली हाथ ही पाता है। इस कारण प्रत्येक अनुभवी पुरुष बोल उठता है कि संसार में या सांसारिक पदार्थों में वास्तविक स्वतंत्रता कदापि नहीं मिलती। क्योंकि वास्तविक स्वतंत्रता तो देश काल और वस्तु की सीमा से परे हटकर, अर्थात् देश, काल और वस्तु की परिच्छिन्नता से रहित होकर मिलती है। इनके कीचड़ में फँसे रहने से नहीं मिलती। देश, काल और वस्तु के बंधन में पड़कर तो सैकड़ों देश और जातियां इस स्वतंत्रता

के लिये लड़ीं और मरीं। रूस और जापान का युद्ध केवल इसी स्वतंत्रता के लिये हुआ, किंतु स्वतंत्रता फिर भी संसार में आकाशपुष्प ही रही।

प्यारो! जो मनुष्य निज स्वरूप आत्मा में अवस्थान करता है, वह स्वतंत्र ही है, क्योंकि आत्मा ही स्वतंत्रता का भंडार है, और जो अपने स्वरूप (आत्मा) का साक्षात्कार (अनुभव) नहीं करता, वह न इस लोक में स्वतंत्र हो सकता है, और न परलोक में अविनाशी आनंद को प्राप्त कर सकता है। ज्ञानवान् पुरुष इस संसार के पदार्थों और बंधनों से मुँह मोड़कर मुक्ति के अमृत को प्राप्त करते हैं। Deserted Village (उजड़े गाँव) नामक काव्य के रचयिता अंग्रेज़ कवि गोल्ड स्मिथ और डॉक्टर जॉन्सन से इस विषय पर बहस हो रही थी कि बातचीत करने में ऊपर का जबड़ा हिलता है या नीचे का। यह सीधी सादी बात थी मगर इस बड़े लेखक (गोल्ड स्मिथ) की समझ में नहीं आती थी, यद्यपि इस बात पर उसका अमल था, क्योंकि यदि उसका जबड़ा न हिलता होता तो वह बातचीत न कर सकता।

जैसे अंगरेज़ों के यहाँ क्रॉमवेल और मुसलमानों के यहाँ बाबर हुआ है, वैसे ही हिंदुओं के यहाँ इस युग में रणजीत सिंह हुआ है। इस भारतगौरव और पँजाब के नर-सिंह का ज़िक्र है कि एक बार शत्रु की सेना अटक नदी के पार थी और इसके आदमी नदी के पार जाने से झिझकते थे। इसने अपना घोड़ा उस नदी में यह कहकर डाल दिया कि—

सभी भूमि गोपाल की, पावें अटक कहाँ।
जाके मन में अटक है, सो ही अटक रहा॥

उसके पीछे उसकी सारी सेना नदी को पार कर गई। यद्यपि

शत्रु की सेना के सामने यह थोड़े से आदमी थे, किंतु उनकी यह वीरता देखकर शत्रु की सेना के हृदय हिल गये और सब के सब इनके इस उत्साह से भयभीत होकर भाग गये, और युद्ध-क्षेत्र भारत के उस सूरमा के हाथ आया। यह बात क्या थी? उसके हृदय में विश्वास अर्थात् इसलाम का जोश मौजें मार रहा था। वह रात भर ईश्वर के ध्यान में मग्न रहता था। उसकी प्रार्थनाओं में खून आंसू होकर आंखों की राह बह निकलता था। यही कारण था कि उसके भीतर वह बल आ गया। आत्मबल, विश्वासबल या इसलाम की शक्ति से वह भर गया, या दूसरे शब्दों में यों कहो कि उसने आत्मा का साक्षात्कार किया। यहाँ ज़बानी जमा-खर्च का काम नहीं। साक्षात्कार वह अवस्था है जहाँ रोम रोम से आनंद बह रहा हो। कहते हैं कि हनूमान् के रोम रोम में राम लिखा हुआ था। इसी तरह इस रणजीतसिंह के भीतर विश्वास का बल भरा हुआ था। ऐसे साक्षात्कार वालों को नदी भी मार्ग दे देती है, पर्वत भी अपने सर-आँखों पर उठा लेता है। संसार की सफलता का भी यही गुर-भीतर की शक्ति या आत्मबल-है। मेरे भीतर वाला परमेश्वर सर्व शक्तिमान् है। "वह कौनसा उक़दा है जो वा हो नहीं सकता" अर्थात् "वह कौन सी ग्रंथि है, जो खुल नहीं सकती"?

जर्मनी का बादशाह फ्रेडरिक दि ग्रेट फ्रांस के साथ लड़ रहा था। उसकी फ़ौज हार गई और उसको हार विदित हुई। कुछ लोग मारे गये, कुछ फ्रांसीसियों के हाथ आगये। यह बादशाह विद्या-प्रेमी और ईश्वर-भक्त था। उसको आत्म-साक्षात्कार की कुछ थोड़ी सी झलक आ गई थी। उसने उन थोड़े से बचे-खुचे आदमियों से कहा कि दस-पांच

आदमी एक प्रकार का बाजा लेकर पूरब से बजाते हुए आओ और कुछ लोग पच्छिम से, और कुछ उत्तर से, और कुछ दक्खिन से। प्रयोजन यह कि वे थोड़े से आदमी चारों ओर से बाजा बजाते हुए उस क़िले के भीतर आने लगे, जिसे फ्रांसीसियों ने छीन लिया था, और यह नरव्याघ्र अकेला, बिना हथियार लिये हुए, उस क़िले में घुस गया, और उच्च स्वर से कहने लगा कि "यदि अपने प्राण सकुशल ले जाना चाहते हो तो अपने अपने हथियार फेंक दो। और क़िला छोड़कर भाग जाओ, नहीं तो मेरी सेना जो चारों ओर से आ रही है तुमको मार डालेगी।" चारों ओर से बाजों की आवाज़ सुनकर और इस वीर पुरुष का साहस देखकर वह लोग घबड़ा गये और तत्काल दुर्ग छोड़कर भाग गये। इस वीर पुरुष ने अकेले और बिना अस्त्र-शस्त्रों के ही उस दुर्ग पर विजय पाई और शत्रुओं को पराजय विदित हुई। बस, संसार में भी इस आत्मबल की आवश्यकता है, इस साक्षात्कार की ज़रूरत है। राम जान जानकर विदेशों की कहानियाँ तुमको सुनाता है कि तुमको ज़रा तो ख़याल आवे। यह अमृत अर्थात् आत्मा का साक्षात्कार करना निकला तो भारत वर्ष से ही, किन्तु इससे लाभ उठा रहे हैं अन्य देशवाले। इस ब्रह्मविद्या की प्रत्येक को आवश्यकता है। क्या धार्मिक उन्नति और क्या सांसारिक उन्नति, दोनों के लिये विश्वास या वेदांत या ब्रह्मविद्या या आत्मसाक्षात्कार की आवश्यकता है। क्या तुमको इस आत्मसाक्षात्कार की आवश्यकता नहीं है? यही भीतर का आत्मबल तुम्हारा आचरण है, और बाहर के रगड़े-झगड़े तुम्हारे आत्मबल को जोखिम में डालते हैं। जब मनुष्य सीधी राह इस आचरण को प्राप्त नहीं करता, तो विपत्तियाँ उसके भीतर से आत्मबल को उभाड़कर इसे

उत्पन्न कर देती हैं। विकासवाद (Evolution) का नियम पुकार पुकार कर इसी उत्तम पाठ का उपदेश कर रहा है, और यह प्रकृति का नियम है कि जिनमें बल होगा वही स्थिर रहेंगे। जिसके भीतर साहस है उसी में शक्ति है और जिसमें शक्ति है उसीमें जीवन है। साहस तो भीतर की वस्तु है। जहाँ परमेश्वर है वहीं साहस है। डंडे की चोट से चलना तो पशुओं का काम है, मनुष्य समझ लेता है और उसे काम में ले आता है—

"खुद तो मुंसिफ़ बाश ऐ जाँई निकोश्रा आँ निको।"

अर्थात् ऐ प्यारे प्राण! तू स्वयं न्यायी बन कि यह अच्छा है या वह अच्छा है। क्या आवश्यकता है कि प्रकृति (Nature) तुमको डंडे मार मारकर सिखलाए? खुशी से क्यों न सीखो? इस जगत् से मुँह मोड़ना क्या है? एक तो यह कि बाहर की वस्तुएं आपकी दृष्टि में न रहें और दूसरा "मूतू क़िब्ल अंतू मूतू" अर्थात् मरने से पहले मर जाना है, या सब कुछ उस ईश्वर (अपने आत्मा) के अर्पण कर देना है। जब सब बाहर की वस्तुएं इस प्रकार आहुति में डाल दी जाती हैं, तब तो त्रिलोकीनाथ ही रह जाते हैं। कोई भी मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता जब तक कि उसे आत्मबल का विश्वास न हो। जिसमें यह विश्वास अधिक है वह स्वयं भी बड़ा है और औरों को भी बढ़ाता है—

धन भूमी धन देश काल हैं।
धन धन लोचन दरस करें जो॥

जिस जंगल में आत्मसाक्षात्कारवाला पैर रखता है, वह देश का देश प्रफुल्लित होजाता है। विज्ञान स्वरूप महात्मा वह ही है, जिससे प्रेम का सोता बह निकलता है:—

रवाँ कुन चशमहा-ए-कौसरी रा।

अर्थात् कौसर (नदी) के सोतों को जारी कर। ये ही स्वर्ग की नदियां या आत्मानंद की नदियां हैं। किसको इस पानी की ज़रूरत नहीं है? फूल हो या घास, गेहूं हो या कपास, मनुष्य हो या पशु, सभी को इस पानी की जरूरत है।

सुलेमाना बियार अंगुश्तरी रा।

अर्थात् सुलेमान! अंगूठी को ला। जब अंगूठी मिल गई फिर भटकना किस लिये? कहां तो तुम्हारा दिल का राज और कहां तुम भिखारी? कहां तो तुम्हारा आनन्द का धाम और कहां यह हाड़ और चाम?

सूर्य को सोना और चंद्रमा को चाँदी तो दे चुके।
फिर भी परिक्रमा करते हैं देखूं जिधर को मैं॥

यह कोई याचना नहीं है, सच्ची घटनाएं हैं। सीधे सादे शब्दों में इसका अर्थ होता है कि सिवाय परमेश्वर के तुम्हारा आत्मा कुछ और नहीं है। जब परमेश्वर मेरा आत्मा है तो मैं दुख में कैसे रहूं। संसार में ऐसे पुरुष होगये हैं जिनके भीतर से विश्वास के सोते बह निकले हैं, और इस जीवन-दायक जल से देश के देश सिक्त होते चले गये हैं। अरब में कोई होगया है, जिसके भीतर से यह विश्वास की आग भड़क उठी। यह विश्वास कभी दासोऽहम् के भाव में और कभी शिवोऽहम् के भाव में प्रकट हुआ करता है। वह अरब-केसरी सब को यों दहाड़ता है—

अगर सूर्य हो मेरी दाईं तरफ,
और हो चाँद भी बाईं जानिब खडा।

कहें मुझसे गर दोनों-'बस, अब रुको',
तो न मानू कभी कहना उनका जरा॥

वह जो भीतर का आत्मबल है उसके सामने सूर्य और चंद्रमा की क्या बिसात है? 'एकमेवाद्वितीयं नास्ति" अर्थात् "एक ईश्वर के सिवाय दूसरा कुछ भी नहीं है" सीधी सादी बात है, मगर विश्वास क्यों नहीं आता?

विश्वास, श्रद्धा, ईमान, यक़ीन सब का अर्थ एक ही है। उसका ईमान चला गया या वह बेईमान है, यह बड़ी भारी गाली है। फिर क्यों नहीं ईमान, यक़ीन, श्रद्धा या विश्वास लाते? किसमें? उसी एक आत्मदेव में जो प्राणों का प्राण और जीवों का जीव है। अगर यह विश्वास हो तो सारे पाप धुल जाँय। अगर देश में एक ऐसा व्यक्ति उत्पन्न हो जाय तो देश का देश प्रफुल्लित हो जाय। बस अपने अहंभाव को दूर करो, खुदी को मिटा दो और इस प्याले के भीतर जो आत्मदेव का अमृत है, उसका पान करो। इस अमृत की किसको आवश्यकता नहीं है? मुसलमान, ईसाई, यहूदी और हिंदू सभी तो इस अमृत की चाह में मारे मारे फिरते हैं।

एको अलिफ तेरे दरकार।

अलिफ़ को जानना था कि आत्मबल आ गया। "ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या" अर्थात् ईश्वर सत्य है और जगत् मिथ्या है।

उस विश्वास को लाओ जो ध्रुव में आया, प्रह्लाद में आया, नामदेव में आया। इसी विश्वास की बदौलत संपूर्ण शंका संदेह और झगड़े दूर हो जाते हैं। मस्त महात्मा दत्तात्रेय एक बार कहीं जा रहे थे। आँधी आ रही थी। दीपक के प्रकाश में उनका तेजोमय रूप एक दुश्चरित्र स्त्री को अपने कोठे पर से दिखाई दिया। इस सूर्यस्वरूप महात्मा के तीन बार दर्शन पाते ही उस नारी के हृदय का अंधकार दूर हो गया और उसकी दशा पलट गई। महात्माओं के दर्शन ही

से विषय-वासना दूर हो जाती है। किसी का महात्मा होना ही सारे संसार को हलचल में डाल देना है, चाहे वह देश में उपदेश दे या न दे। केवल देश की ही दशा नहीं, सारे संसार की दशा उसके उत्पन्न होते ही उत्तम हो जाती है। जिस प्रकार किसी स्थान की हवा हल्की होकर जब ऊपर को उड़ती है तो उसकी जगह भरने को चारों ओर की हवा वहां आ जाती है, और सारे वायुमंडल में हलचल पड़ जाती है, उसी प्रकार एक महात्मा भी सारे संसार को हिला देता है। और यदि तुम महात्मा के अस्तित्व ही को नहीं मानते तो फिर कैसे उससे लाभ उठा सकते हो? यदि किसी ने तुमको सोने के स्थान पर कोई और वस्तु दे दी, तो क्या तुम उससे यह परिणाम निकालोगे कि सोना है ही नहीं या सारे संसार में ताँबा ही है। जो सोने को माने ही गा नहीं, वह भला उसे कहां पायगा? जहां सच है वहां झूठ भी आ जाता है। मुलम्मे का होना असली सोने की बड़ाई को ही प्रकट करता है, कुछ उसके अस्तित्व को नहीं मिटाता। संसार का इतिहास इस बात को सिद्ध करता है। कोई व्यक्ति आँखें खोलकर संसार रूपी बाज़ार में विचरे। जिसकी दृष्टि में ब्रह्म ही ब्रह्म हो, वह सारे संसार को प्रेमरूप देखकर प्रसन्न होता है, और जिसके भीतर शत्रुभाव की अग्नि प्रचंड है, वह अपने चहुं ओर शत्रुओं को ही पाता है और उसको सारा संसार शत्रुता से पूर्ण दिखाई देता है। इसलिये ओ प्यारे! आनन्द के खोजनेवाले! ज़रा दृष्टि को फेर।

बेगाना गर नजर पडे तू आशना को देख;
दुशमन गर आये सामने तो भी खुदा को देख॥

जो कुछ दीखे जगत में, सब ईश्वर से ढाँप।
करो चैन इस त्याग से, धन लालच से काँप॥

जिसकी ऐसी दृष्टि हो जाती है, उसके लिये दुःख और शोक कहां आ सकते हैं ? और उसके होने से सारे देश में साहस और शक्ति आजाती है । अतः ऐ सुधारको ! बतलाओ, आत्मसाक्षात्कार करना कितना बड़ा सुधार है ? पहले अपने आपका सुधार करो अर्थात् अपनी दृष्टि उच्च करो, फिर सारे देश में सुधार आप ही होजायगा । आज कल संसार में जो सबसे बड़ी यूनिवर्सिटी है, उसके प्रोफ़ेसर डाक्टर सतारबक यों राय देते हैं कि मस्तिष्क में विश्वास से एक प्रकार की लकीरें पैदा होजाया करती हैं । जब कोई दूसरा पक्का विश्वास उसी मस्तिष्क में स्थान लेना आरम्भ करता है, तो पहले की लकीरें मिट जाती हैं, और नई पैदा हो जाती हैं । इसलिये एक प्रकार की पहली लकीरों का मिटाना और उनके स्थान पर वहां दूसरी लकीरों का पैदा हो जाना चाल-चलन का बदलना या भीतरी परिवर्तन कहलाता है । यही इसलाम, विश्वास और यक़ीन है, जिसके बिना मन के पहले स्वप्न के चिन्ह और धब्बे दूर नहीं होते और मन शुद्ध नहीं होने पाता ।

आज कल इंग्लैंड और अमेरिका इसी विश्वास की बदौलत उन्नति कर रहे हैं । यूनान कहां गया ? उसका धर्म क्या हुआ ? रोम और मिस्र के धर्म क्या हुए ? किन्तु आश्चर्य की बात है कि भारतवर्ष पर विपत्ति पर विपत्ति आने पर भी धर्म की गंध स्थिर रही । क्यों जी, महाराजा रामचन्द्र इसी देश में उत्पन्न हुए थे? प्यारे कृष्णचन्द्र भी इसी भारत की गोदी में पले थे ? यह मेल और एकता ऐसे शूरवीर ही स्थिर रख सकते हैं । जिस देश में वीर (Hero) नहीं, वह देश स्थिर नहीं रह सकता । इसी तरह राम और कृष्ण के नाम और

वेदों की बदौलत यह देश स्थिर है। इन सूरमा महात्माओं से उसी प्रकार लाभ उठाना चाहिये जैसे कि हम स्वराज्य से उठाते हैं। हबस के लोग हर वक्त सूर्य के सामने रहने के कारण कैसे काले होजाते हैं। हमको भी राम और कृष्ण की उपासना करते हुए अपने हृदयों को काले न होने देना चाहिये। जब आंखों को अपने भगवान् के अर्पण कर दिया, फिर तो वह आंखें ईश्वर की हो गई न कि आपकी। इसी प्रकार जब बाहुओं को ईश्वरार्पण कर दिया तो वह ईश्वर के हो गये। इसी तरह जब आपने अपने आप (आत्मा) को ईश्वरार्पण कर दिया तब आप परमात्मा की पवित्र जाति हो गये—साक्षात् भगवान् राम या कृष्ण हो गये। अब प्रेम का पीलापन ज्ञान की लालिमा में परिवर्तित हो गया, और परिणाम में आनन्द की मस्ती टपकने लगी।

आज तीन दिन राम को, जिसके यहां आनन्द की बादशाहत के सिवा कुछ और है ही नहीं, तुम्हारे यहां झाड़ू देते हो गये। आज तो गद्दी पर बैठता है और कहता है कि शपथ है ईश्वर की, सत् की, राम की, कि तुममें से प्रत्येक वही पवित्र जाति आत्मा या शुद्ध ईश्वर है। जानो अपने आप को, और छोड़ो इस दासपन को। तुम्हारा साम्राज्य तो सच्चा है।

वाह! क्या ही प्यारा चित्र है। आंखों का फल मिला। उस सोहने युवक का जीना सफल हुआ।

महल ऐसा जिसकी छत पै हैं हीरे जडे हुए।
१ कौसोकुजह ओ २ अब्र के परदे तने हुए॥

× × × × ×

१ मेघधनुष २ मेघमण्डल।

१ मसनद २ बलंद ३ तख्त है पर्वत हरा भरा।
और शज़ ४ देवदार का है चँवर झूलता॥

५ नगमें सुरीले ओम् के हैं इससे आ रहे।
नदियां ६ परिंदे याद में हैं सुर मिला रहे॥

७ बेहोशो हिस है गरचिः पड़ा खाल की तरह।
दुनिया है इसके पैर के फुटबाल की तरह॥

× × × × ×

कैसी यह सल्तनत है, ८ अदू का निशां नहीं।
जिस ९ जा पै राज मेरा है ऐसा मकां नहीं॥

× × × × ×

क्यों दाएं से और बाएं से मुड़ जाये न आंखें।
जब रंग हुआ दिलख्वाह तो जड जाएं न आंखें॥

ॐ आनन्द ! ॐ आनन्द !!
ॐ आनन्द !!!

———०———

१ विश्रान्ति का स्थान, २ उच्च, ३ आसन, ४ वृक्ष, ५ ध्वनि, ६ पक्षी, ७ निश्चेष्ट अवस्था, ८ शत्रु, ९ स्थान।

पत्रमञ्जूषा ।

—— ० ——

कैसिल स्प्रिंग्स, कैलीफोर्नियां,
११, जून १९०३ ।

मेरे प्रियतम प्यारे आप,

कुछ लिखने और कहने की ज़रूरत है ? राम सब कुछ जानता है, अर्थात् तुम सब कुछ जानते हो । किन्तु फिर भी राम तुम्हे उन बातों के बारे में कुछ बतावेगा, जो यहां हाल ही में घटी हैं, और राम को अति सुखदायक हुई । राम को हर बात से आनन्द मिलता है ।

१९ मई को जब राम नदी तट पर एक चटिया पर पड़ा हुआ था, सियाटल (नगर) से एक मित्र द्वारा अचानक भेजा हुआ एक बड़ा ही सुन्दर झूला लाकर डा० हिलर के स्थानीय मैनेजर ने राम को दिया । वह तुरन्त सिन्दूर (वलूत) के एक हरे और देवदारु के एक लाख वृक्षों के बीच में ऊँचे पर डाल दिया गया । बुलबुलाती खुशी और उमगती हंसी के साथ राम पालने में लोटने लगा । सुगन्धित, मन्द झकोरे राम को झुलाने लगे । नदी अपनी मधुर ॐ ध्वनि से बह रही थी । राम ने खूब कहकहे लगाये । तुम ने उसका हंसना सुना था ? राम जिस समय झूल रहा था एक चहकती हुई 'रोबिन'* चिड़िया ऊपर से ताक रही थी । वह शायद राम से डाह कर रही थी । यही बात है ? नहीं ऐसा नहीं हो सकता । प्रत्येक

---

* एक पक्षी विशेष जिसकी छाती लाल रंग की होती है ।

'रोबिन' गौरैया, या बुलबुल राम को अपना ही जानती है। कुछ भी हो, अतिशय भीतरी प्रसन्नता को इधर उधर नाच-कूद और किलोल करके निकाल देने के निमित्त कुछ देर के लिये झूले से राम के उतर आने के अवसर में मनोहर 'रोबिन' ने दो एक पेंग झूल लेने का सुख लूटा। कहो! राम की छोटी चिड़िया और फूल खेलंदड़े, मौजी और स्वाधीन नहीं हैं?

२० मई, दोपहर। संयुक्त राज्यों के राष्ट्रपति उत्तर जाते हुए कुछ देर के लिये मार्ग में 'स्प्रिंग्स' में ठहरे। स्प्रिंग्स कम्पनी की मुख्य कार्यकर्त्री महिला ने एक टोकनी सुन्दर फूल उन्हें भेंट किये। इसके बाद तुरन्त ही उन्होंने सादर, प्रेमपूर्वक और प्रसन्नता से † 'भारत की ओर से निवेदन' राम का उपहार स्वीकार किया। उन्होंने बराबर इस पुस्तिका अपने दहने हाथ में रक्खी। जनता के सलामों के उत्तर देने में पुस्तिका स्वभावतः तथा अनायास कम से कम सौ बार उनके माथे में लगी। गाड़ी चलने पर वे अपने दर्जे में ध्यान से पुस्तिका पढ़ते देखे गये, और छूटती हुई गाड़ी से एक बार फिर उन्होंने राम के प्रति धन्यवाद का संकेत किया।

किन्तु देखो! राम ने राष्ट्रपति से काव्यमय झूले के दो एक पेंगों का सुख लूटने को नहीं कहा। अनुमान कर सकते हो, क्यों नहीं? कृपया अनुमान करो। अच्छा, तुम कुछ बताते नहीं हो, इसलिये राम तुम्हें बताये देता है। कारण बहुत ही साफ है। स्वतंत्र कहलाने वाले अमेरिकनों का राष्ट्रपति राम की चिड़ियों और पवन की तुलना में रुपये में कौड़ी भर भी स्वतंत्र नहीं है।

---

† स्वामी राम का एक व्याख्यान जो अमेरिका में एक पुस्तिका के आकार में छपा था।

राष्ट्रपति को जाने दीजिये। तुम स्वतंत्र हो सकते हो, उतने ही स्वतंत्र जितना राम है, और पवन तथा प्रकाश को अपने भक्त, सेवक बना सकते हो। राम हो जाओ, और राम तुमको सर्वस्व दे डालेगा—सूर्य, तारागण, समुद्र, मेघ, बन, पहाड़ और क्या नहीं! हरेक चीज़ तुम्हारी हो जायगी। क्या ये लाभ का सौदा नहीं है? प्यारे, क्या बात ऐसी नहीं है? कृपा करके हरेक चीज़ के अधिकारी बनो।

ऊषा के चुम्बनों का जगाया, मन्द-सुगन्ध पश्चिमी झकोरों की गुदगुदी का हँसाया, गाती चिड़ियों के मधुर गीतों का दुलराया राम सबेरे चार बजे पहाड़ों की चोटियों और नदीतट पर टहलने जाता है।

आओ, हम साथ हसें, हसें, बार २ हसें। मेरे बच्चे, सूर्य! आ! राम के निडर मुस्कराते नयनों से नयन मिला और राम तथा प्रकृति के निकट वास कर। मैं स्वयं समाधि हूं।

तुम्हारा आत्मा,

राम।

—— :-*-: ——

ई. १६०५।

श्री स्वामी शिवगणाचार्य जी,

किशनगढ़।

नारायण,

वैद्यों का कहना है कि जब तक भीतर से भूख न लगे हमें कोई वस्तु न खानी चाहिये, वह चाहे जितनी स्वादिष्ट और उपकारी हो और हमारे मित्र तथा सम्बन्धी उसे खाने को हमसे कितना ही आग्रह क्यों न करें। यदि मैं तुरन्त चल पड़ूं तो आपकी और किशनगढ़ रियासत के सुयोग्य प्रधान मंत्री दोनों की संगति का सुख लूटने और आपकी

गंभीर सलाहों से लाभ उठाने का बहुत ही अच्छा अवसर है। किन्तु मेरी भीतरी वाणी मुझे रुकने की आज्ञा देती है, साथ ही पूर्वसूचना भी मिल रही है कि, जब मैं पूरी तरह से तैयार होजाऊंगा, अधिकतर अच्छे अवसर हाथ लगेंगे। अपनी पहले की असफलताओं से—यदि उन्हें असफलतायें कह सकते हैं—मैं ज़रा सा भी निराश नहीं हुआ हूँ। मुझे पूरी आशा है कि मेरा भावी जीवन-क्रम पूरा सफल होगा। मैं यहां ठीक वही कर रहा हूँ, जो किशनगढ़ में हम लोगों की मित्रभावपूर्ण सलाह का नतीजा होता। निस्संदेह, अनुकूल अवसरों से लाभ उठाने की ताक में हमें हमेशा रहना चाहिये। किन्तु हमें अधीर भी न होना चाहिये। आवश्यकता है एक मात्र काम की। अपने देशवासियों में काम करने की शक्ति या उत्साह फूकने के लिये मुझे खुद सञ्चित उद्योग-शक्ति के बहुत बड़े भण्डार के साथ कार्य शुरू करना चाहिये। समय आने दो, आप हमारे साथ अवश्य होंगे।

यदि तुच्छ बातों के लिये मुझे इधर उधर जाकर गुलगपाड़ा नहीं मचाना है, किन्तु मातृभूमि की कुछ वास्तविक और चिरस्थायी सेवा करना है, और यदि देश के लिये मुझे अपने को सचमुच उपयोगी सिद्ध करना है, तो मैं समझता हूँ कि अपने को इस महत्तम कार्य के योग्य बनाने के लिये मुझे थोड़ी सी और तैयारी की ज़रूरत है।

मैं यहां शास्त्रों और उच्चतम पाश्चात्य विचार का पूरा अध्ययन कर रहा हूँ और साथ ही अपनी स्वतंत्र गवेषणा में भी लगा हुआ हूँ। इस काम में मुझे अपना सारा जीवन नहीं लगा देना है। लगातार परिश्रम के मूल्य पर जो कुछ प्राप्त करता आया हूँ, वह मैं शीघ्र ही मानवजाति को देता बल्कि उसके हृदय और व्यवहार में भरता दिखाई दूँगा। मुझे पूरा

विश्वास है कि, यदि मैं चाहता तो देश में अब तक न जाने कब बेढब हलचल मचा दी होती। किन्तु मेरा अन्तःकरण कहता है कि किसी प्रकार के निजी गौरव, लाभ, धमकियों, नगीच आई हुई जोखिम, या मृत्यु के भय से भी उस बात का प्रचार न करूँगा जिसको साक्षात्कार से मैंने सत्य अनुभव नहीं किया है।

यदि सत्य में कोई बल है, और निस्सन्देह वह अनन्त बल है, तो राजा और साधु को, जनता और अमीर-उमरा को रामतीर्थ स्वामी के गाड़े हुए सत्यता के झंडे को अन्त में झुकना और पूजना होगा। मुझे इस काम में रुचि है, और शीघ्रता या अधीरता के वश किसी छोटे दर्जे के काम में मेरा जुत जाना अपनी शक्तियों को गंवा देना होगा।

मुझे उपदेश तो करना ही है, नहीं तो अपने बचपन से ही इस इच्छा को बड़े चाव से क्यों पालता? मुझे धर्म प्रचार तो करना ही है, नहीं तो माता पिता, स्त्री, बच्चों, पद और उज्वल भविष्य को क्यों त्याग देता? यहां के अपने अनुभवों का मुझे साहसपूर्वक, निर्भय होकर, सब प्रकार के कष्टों और विरोध के सामने दैवी तेज से पूरित होकर प्रचार करना है।

भावी उपयोग के लिये रुपया रखने की आपकी सलाह मैं धन्यवाद सहित स्वीकार करता हूँ।

नियमपूर्वक कसरत की जाती है। स्वास्थ्य अच्छा है। जल वायु अति उत्तम है। आपको और बाबू साहेब को प्राप्त हो

शान्ति! शान्ति!! शान्ति!!!

रामतीर्थ स्वामी।

—o—

ॐ

ई० १९०२।

नमो नारायणाय !

" मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्टा
युद्धयस्व जेतासि रणे सपत्नान् "

काम तो भगवान ने पहले ही किया हुआ है, यह हम तुम व्यक्तियां तो बहाना है।

भगवन्,

नेपाल को भेजा हुआ आपका प्रेमपत्र मिला। प्रभो, आप का आरंभ किया हुआ कार्य तो अवश्यमेव फले फूलेगा और खूब फैलेगा। राम आप के साथ है। शनैः शनैः सारे भारत की सहायता आप के साथ हो जानी है।

राम का यहां वनों में कुछ काल व्यतीत करना बड़ा आवश्यक था।

जैसे भूके को रोटी न मिले तो मरता है वैसे यह राम एकान्त सेवन, प्रेम में रुदन, मस्ती में भ्रमण, यदि न पाय, तो जी नहीं सकता। जिनकी मौज़ हो इस बात पर पड़े हँसे।

" तं त्वा भग प्रविशानि स्वाहा।
स मा भग प्रविश स्वाहा।
तस्मिन् सहस्र शाखे,
निभगाहं त्वयि मृजे स्वाहा,
व्यशेम देवहितं यदायुः॥ "

आपका अपना आप,

रामतीर्थ ॐ ॥

माया।

मशाल का घुमाना या मरहटी ज्वाला (अलात चक्र) का प्रयोग भारतवर्ष के अधिकतर भागों में अप्रचालित नहीं है। वह जगमगाती हुई ज्वाला कभी तो प्रकाश के एक बड़े चक्र के सदृश दिखाई देती है, कभी अग्नि की एक अटूट रेखा के तुल्य मालूम होती है, और कभी अंडाकार हो जाती है, कभी ऊपर जाती है पुनः नीचे आती है, अर्थात् इसी प्रकार यह अनेक विचित्र रूप धारण करती है। तो क्या ये सब रूपों का उस ज्वाला (ज्योति) में वास्तविक अस्तित्व होता है? क्या वे मशाल से निकलते हैं? या वे बाहर ही बाहर अपने आप बन जाते हैं? जब मरहटी (बनेठी) नहीं घुमाई जाती तो क्या वे रूप उसमें प्रवेश कर जाते हैं? या वे कहीं और चले जाते हैं? इन सब प्रश्नों का उत्तर 'नकार' ही में देना पड़ता है। जिस समय मशाल घूमती है उस समय सीधी और टेढ़ी लकीरें उत्पन्न होती हैं। और जब घूमना बन्द हो जाता है, तब मशाल में उन रूपों का कोई चिन्ह नहीं दिखाई देता। जिस समय मशाल ख़ूब ज़ोर से घूमती है और यद्यपि वे रेखायें प्रत्यक्ष दिखलाई देती हैं, तभी वे वास्तविक नहीं होती।

उसी तरह शुद्ध चैतन्य (Absolute consciousness) स्थिर हुए मशाल की अनुसार नामरूप (दृश्य जगत) के संपर्क से अलिप्त है। और जब नामरूपादि नानात्व भासित होते हैं, तो वे आभास केवल फिरनेवाली मशाल के रूपों की तरह मायिक होते हैं। चैतन्य सदैव उनसे अलिप्त और अविकृत रहता है। वह अखंड ज्योति सम्पूर्ण दृश्यों में विद्यमान रहती है। परन्तु ज्योति में दृश्य कभी नहीं रहते। इसी प्रकार सब नामरूपों में 'राम' तो रमता है, परन्तु राम में नामरूप केवल नश्वर अथवा मायिक होते हैं। जैसे फिरने वाली मशाल से उत्पन्न होने वाले भासमान रूपों का अस्ति-

त्त्व केवल उसके भ्रमण करने की गति पर अवलंबित होता है, उसी तरह से नाना प्रकार के नाम रूपों का (जिन पर जगत का आधार है) भासमान अस्तित्व, चैतन्य की माया-शक्ति पर निर्भर है।

इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते।

शक्ति अथवा बल का कहीं स्वयं अस्तित्त्व नहीं होता। वह दृश्य किंवा अदृश्य हो सकती है, परन्तु वह अलग नहीं रह सकती। यह माया शक्ति किसी व्यक्त चैतन्य की स्फूर्ति अथवा मन के स्वरूप में दिखलाई देती है। संकल्पविकल्पात्मक मन और दृश्य जगत दोनों एकही वस्तु के पेट और पीठ है। संकल्प शून्य और स्थिर मन और शुद्ध चैतन्य अर्थात् केवल ब्रह्म एक ही है। यदि मन की वासनायें और आसक्ति रूप मैल निकाल डाला जाय, तो मन की चंचलता दूर हो जाती है और उसमें स्थिरता आजाती है। पूर्ण स्थिरता प्राप्त हुई कि मानो मन ब्रह्मस्वरूप हो गया। इस साक्षात्कार से माया पराजित हो जाती है। यह जगत नन्दन वन बन जाता है। और अपना गया हुआ स्वानन्द का साम्राज्य तत्काल पुनः प्राप्त हो जाता है। सर्वत्र आनन्द मालूम होता है। द्वैतभाव समूल नष्ट हो जाने पर सम्पूर्ण भय और चिन्ता उस अखंड सत्-चित्-आनन्द स्वरूप में सर्वदा के लिये लिप्त हो जाती है।

राम के सामने एक युवा पुरुष ने सूंघने के लिये एक गुलाब का पुष्प तोड़ा। ज्योंही वह उसे अपनी नाक के पास ले गया त्योंही एक मधुमक्खी ने उसकी नाक की नोक में काट खाया। वह मनुष्य मारे दर्द के रोने लगा और पुष्प उसके हाथ से गिर पड़ा।

क्या प्रत्येक गुलाब की पंखड़ी में मधुमक्खी होती है? अवश्यमेव ऐसा कोई भी विषयोपयोग रूपी गुलाब नहीं है, जिसमें दुःखरूपी मधुमक्खी न छिपी हो। बेरोक वासनाओं

को वेदना रूप दंड मिलना अवश्यक है।

हे महा विस्मरणशील लोगो! अपने आत्मस्वरूप को मत भूलो। इसी बनावटी गुलाब को तोड़ने की तुम्हें कुछ आवश्यकता नहीं। क्योंकि जहां २ प्रफुल्लित गुलाब है वहां २ तुम उपस्थित हो और उसको मोहित करनेवाला रूप रमणीय सुगन्ध तुम्हारी ही है। यदि राज्य को देखो तो उसका सम्पूर्ण वैभव तुम्हीं से है, सौंदर्य को देखो तो उसकी रमणीयता भी तुम्हीं हो और सुवर्ण तथा रत्नादि को देखो तो उनकी उज्ज्वल प्रभा भी तुम्हीं हो। इस लिये खाली वासनाओं को वृथा अपने मन में क्यों लाते हो? सर्वात्मा के साथ अपनी आत्मा की एकता को पहचानो। परमात्मा के साथ अपना अभेद अनुभव करो। तुम वही कृष्ण भगवान् हो, जिन्होंने एक ही समय सहस्रों गोपियों के साथ हाथ में हाथ डालकर रासलीला की थी। समुद्र में और राजमन्दिर में, वन में और उपवन में रणभूमि में और अन्तःपुर में, अर्थात् सब जगह और सब काल में तुम बराबर उपस्थित हो।

राम सब से ऊंचे पर्वत पर खड़ा होकर घोर गर्ज के साथ कहता है कि "दरिद्रता और दौर्बल्य की शिकायत करने वाले लोगो! सचमुच तुम सर्वशक्तिमान परमात्मा हो, स्वयं 'राम' हो। अपनी ही कल्पनाओं में स्वयं मत जकड़ जाओ। उठो, जागृत हो जाओ और अपनी निद्रा और संसार रूपी स्वप्न को झाड़ कर अलग फेंक दो। जब तुम्हीं सब कुछ हो, तो वृथा दुःख और दरिद्रता में क्यों फँसे पड़े हो। अरे ज़रा उठो और निजस्वरूप को पहचान लो। यह सब दुःखदरिद्र अपने आप ही लोप हो जायगा। सारे सुखों की खान और सम्पूर्ण आनन्द का अन्तरात्मा तुम्हीं हो। कोई वस्तु तुम्हें हानि नहीं पहुँचा सकती। ज़रा राम की खातिर से अपनी आत्मा को पहचानो। विलम्ब क्यों करते हो? उस यथार्थ रूप से पहचानो। तुम रात दिन अविश्रांत

श्रम से और बड़े उत्साह से सुख के ढूढ़ने में लगे हुए हो, परन्तु इस काम में तुम्हें सदैव निराशा ही होगी है। ऐसे मूर्ख मत बनो। इन्द्रियों के विषयों में सुख मत ढूंढ़ो। हे इन्द्रियों के दास! अपनी इस सुख की निष्फल और बाहिरी खोज को छोड़ दो। अमरत्व का महासागर तुम्हारे अन्दर है। स्वर्ग का राज्य तुम्हारे भीतर है। तुम अमृत के भा अमृत हो। मन और संसार को परमात्मस्वरूप में लय कर दो. अपने क्षुद्र अहंकार को त्याग कर पवित्र मस्ती में आजाओ। हे प्रियवरों! इस नश्वर शरीर के क्वारेंटाइन की इतनी चिन्ता क्यों करते हो? इस बात की तनिक भी चिन्ता न करो कि इन अनात्मा का परिणाम क्या होगा। सारे नाते गोते के मिथ्या विचारों को दूर करो। जो आंखें ईश्वर को नहीं देखतीं यदि वे फूट जायें तो अच्छा है! धिक्कार है उस अन्तःकरण को जो वासना रूपी बीमारियों को धारण किये हुए हैं। अपने आंसुओं से सारी नास्तिकता को धो डालो। अपने वास्तविक स्थान पर अच्छी तरह डटे रहो। निन्दा या स्तुति का वहां गम्य नहीं है। साधारण सुख और दुःख से वहां कोई बाधा नहीं हो सकती। ईश्वर को अपनी नौका में बैठालो और सम्पूर्ण सुखों को जाने दो। अहंकार को किनारे कर दो और बादबान को छोड़ दो। ऐसा करो कि ईश्वरभक्ति रूपी वायु इस क्षणभंगुर नरदेह रूपी नौका के अहंकार रूपी बादबाना को उड़ा ले जाय, और ले जाकर परमात्मा रूपी महासागर में छोड़ दे। भक्ति रस के नशे में जो लोग डूबे हैं वे बहुत सुखी हैं। धन्य हैं वे लोग जिन्हें ईश्वरी मस्ती का घनघोर नशा चढ़ा हुआ है। वे मनुष्य पूजनीय हैं, जो सांसारिक दृष्टि से विनाश हो कर शुद्ध आत्मानन्द में पूर्णतया निमग्न है। राम।

ॐ! ॐ!! ॐ!!!

ब्रह्मलीन श्रीस्वामी रामतीर्थ जी के शिष्य श्रीमान् आर॰ ऐस॰ नारायण स्वामी द्वारा व्याख्या की हुई

श्रीमद्भगवद्गीता ।

प्रथम भागः—अध्याय ६ पृष्ठ संख्या ८२६ ।

मूल्य मात्रः—साधारण संस्करण २) विशेष संस्करण ३)

यूं तो आज तक श्रीमद्भगवद्गीता की कितनी ही व्याख्या प्रकाशित हो चुकी हैं, परन्तु जिस कारण यह व्याख्या अति उत्तम गिनी जाती है, उसे प्रतिष्ठित पत्रों के शब्दों में ही सुन लीजियेः—

सरस्वती का मत है कि, "स्वामी जी ने इस गीता संस्करण को अनेक प्रकार से अलंकृत करने की चेष्टा की है। पहले मूल, उसके बाद अन्वयांकानुसार प्रत्येक श्लोक के प्रत्येक शब्द का अर्थ दिया गया है । उसके बाद अन्वयार्थ और व्याख्या है। इसके सिवा जगह जगह पर टिप्पणियां दी गई हैं जो बड़े महत्व की हैं । बीच बीच में जहां मूल का विषयान्तर होता दिखाई पड़ा है, वहां सम्बन्धिनी व्याख्या लिख कर विषय का मेल मिला दिया गया है । स्वामी जी ने एक बात और भी की है । आप ने प्रत्येक अध्याय के अन्त में उस अध्याय का संक्षिप्त सार लिख दिया है । इससे साधारण लिखे पढ़े लोगों का बहुत हित साधन हुआ है, मतलब यह है कि क्या बहुत और क्या अलपज्ञ दोनों के संतोष का साधन स्वामीजी के उस संस्करण में विद्यमान है। गीता का सरलार्थ व्यक्त करने में आपने कसर नहीं उठा रक्खी । "

अभ्युदय कहता हैः—"हमने गीता की हिन्दी में अनेक व्याख्याएं देखी हैं परन्तु श्रीनारायण स्वामी की व्याख्या के समान सुन्दर, सरल और विद्वत्तापूर्ण दूसरी व्याख्या के पढ़ने का सौभाग्य हमें नहीं प्राप्त हुआ है। स्वामी जी ने गीता की व्याख्या

किसी साम्प्रदायिक सिद्धान्त की पुष्टि अथवा अपने मत की विशेषता प्रतिपादित करने की दृष्टि से नहीं की है। आप का एक मात्र उद्देश्य यही रहा है कि गीता में श्रीकृष्ण भगवान ने जो कुछ उपदेश दिया है उसके उत्कृष्ट भाव को पाठक समझ सकें।"

अवधवासी लिखता है:—"छपाई, कटाई, कागज आदि सभी कुछ बहुत सुन्दर है। आकार मंझोला। पृष्ठ संख्या ८२६ प्रस्तावना बड़ी ही पांडित्यपूर्ण और मार्मिक है जिसमें प्रसंग-वश अवतारसिद्धि आदि गूढ़ विषयों का अत्यन्त रोचक, प्रौढ़ और विश्वासोत्पादक वर्णन हुआ है, कर्म अकर्म का विवेचन, जो गीता का बड़ा कठिन विषय है, ऐसी सुन्दरता से किया गया है कि शास्त्रज्ञ और साधारण पाठक दोनों ही लाभ उठा सकते हैं। सारांश यह कि शास्त्र दृष्टि से यह ग्रन्थ हिन्दी संसार का बेजोड़ रत्न है। शांकरभाष्य, लोक० तिलक कृत गीता रहस्य, अथवा ज्ञानेश्वरी टीका हिन्दी की अपनी वस्तुएं नहीं हैं। ग्रन्थ सर्वथा आदरणीय और संग्रह के योग्य हुआ है। गीता को युक्ति पूर्वक समझाने के लिये यह अपूर्व साधन श्री स्वामी जी ने प्रस्तुत कर दिया है"।

प्रेक्टिकल मेडिसिन (दिल्ली) का मत:—"अन्तिम व्याख्या ने जिसको अति विद्वान् श्रीमान् बाल गंगाधर तिलक ने गीता रहस्य नाम से प्रकाशित किया है, हमारे चित्त में बड़ा प्रभाव डाला था, परन्तु श्रीमान् आर० ऐस० नारायण स्वामी की गीता की व्याख्या ने इस स्थान को छीन लिया है। इस पुस्तक ने हमें और हमारे मित्रों को इतना मोहित कर लिया है कि हमने उसे अपने नित्य प्रातःस्मरण की पाठ पुस्तकों में सम्मिलित कर दिया है"।

विशेष लाभ:—श्री रामतीर्थ ग्रन्थावली के ग्राहकों को विना डाक व्यय के ही यह पुस्तक मिल सकती है।

लीग से मिलने वाली उर्दू पुस्तकों की सूची।

—:※:—

वेदानुवचनः—इसमें उपनिषदों के आधार पर वेदान्त के गहन विषय को ऐसी सरल और रोचक रीति से स्पष्ट किया है कि एक नौसिखुआ भी सहज में समझ सकता हैः—

मूल्य सादी १) सजिल्द १॥)

कुल्लियाते—राम-या खुमखान-ए-रामः-(प्रथम भाग) इसमें तसवीर के साथ स्वामी राम के उर्दू लेखों का संग्रह है।

मूल्य सादी १) सजिल्द १॥)

रामपत्र या ख़तूते रामः—यह स्वामी राम के अमूल्य पत्रों का संग्रह है, जो उन्होंने अपनी तपोमय विद्यार्थी अवस्था में अपने गृहस्थाश्रम के गुरू भगत धन्नाराम जी को लिखे थे। इसमें राम की एक तसबीर भी हैः—

मूल्य सादी ॥) सजिल्द ॥।)

रामवर्षाः दूसरा भागः—स्वामी नारायण की लिखी हुई विस्तृत जीवनी तथा रामप्रणीत वेदान्त विषयक कविताओं का यह संग्रह है। इसमें भी स्वामी जी का एक चित्र है।

मूल्य सादी ॥) सजिल्द ॥।)

रामउपदेशः—देह विसर्जन के थोड़ेही काल के पूर्व स्वामी राम के लिखे हुए ऊर्दू लेखों का यह संग्रह हैः— मूल्य =)

सभ्यता और परिवर्तन के नियम—इसमें वर्त्तमान युग की सुधारणा की वेदान्त दृष्टि से आलोचना की गई हैः—

मुल्य ।)

डाक व्यय सबका अलग